जन्मशती-हीरक-स्वर्ण जयन्ती महोत्सव वर्ष के उपलक्ष्य में

सोहन-काव्य कथा-मञ्जरी

भाग–२

रचनाकार :

प्रवर्तक श्री सोहनलालजी म. सा.

सोहन-काव्य कथा-मञ्जरी भाग-२

☐

प्रवर्तक श्री सोहनलालजी म० सा०

☐

प्रकाशक :

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा–३११ ०२१ (राज०)

☐

प्रथम संस्करण : १९८७

☐

मूल्य : दस रुपये

☐

मुद्रक :

फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जौहरी बाजार, जयपुर–३०२ ००३

प्रकाशकीय

साहित्य की विधाओं में कथा उतनी ही प्राचीन है जितनी कि स्वयं मानव की सृष्टि।

जब दो व्यक्ति मिलते हैं एवं परस्पर कुशल-क्षेम के समाचार पूछते हैं, तब वे अपनी ही कहानी कहते हैं या सुनते हैं। यह कहानी का उद्गम स्रोत है।

तब से अब तक इस कहानी ने एक लंबी दूरी की यात्रा तय की है। कथा से कहानी, फिर लघुकथा व बोधकथा के रूप में विकसित होकर अब वह अ-कहानी की सीमा को स्पर्श करने लगी है।

किसी भी आयु के व्यक्ति के लिए कहानी सुनना या पढ़ना आनन्द-दायक होता है। विविध घटनाक्रम के साथ संजोये गए पात्रों के गतिमान जीवन के माध्यम से मानो पाठक अपनी ही कहानी पढ़ता है। वह घटनाक्रम भी अपनी बात कहकर पाठक के मन में निराकार रूप में पैठकर उसे आन्दोलित करता रहता है अतः उसकी अनुगूंज तो लंबे समय तक सुनाई पड़ती रहती है। इस प्रकार कहानी जीवन से एवं उसके मूल्यों से जुड़ जाती है तथा मानवीय मूल्यों की समृद्धि का माध्यम बनती है।

कथा का मूल आधार घटना का चमत्कार होता है तथा घटना-चमत्कार किसी धार्मिक, नैतिक या साहसिक मूल्य की स्थापना करता है। अति प्राचीनकाल में लिखी गई पंचतंत्र, हितोपदेश, बैताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी आदि की कथायें नीति की शिक्षा प्रदान करने वाली रही हैं जिनसे व्यक्ति व समाज के जीवन को एक दिशा मिली है। उनमें वर्णित व्यक्ति एकाकी न होकर सम्पूर्ण समाज के एक प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होता है इसलिए उसके जीवन से पाठक प्रेरणा प्राप्त कर पाते हैं। यद्यपि कथा का प्रस्थान बिन्दु व्यक्ति है किन्तु गन्तव्य तो समाज ही होता है।

इस कथा-शिल्प के साथ यदि काव्यात्मकता का भी मधुर मेल हो जाय तो सोने में सुगंध आ जाती है। गेयतत्त्व का मेल होने के कारण उसकी प्रभाव-शीलता द्विगुणित होकर पाठक के मन पर स्थायी असर कर जाती है।

प्रस्तुत काव्यात्मक कथा-संकलन के कथा-शिल्पी विद्वद्वरेण्य, परमश्रेष्ठ, मधुर प्रवक्ता, आशुकवि गुरुवर्य श्री सोहनलाल जी म. सा. भी एक ऐसे ही

अमर कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कथाओं के माध्यम से, तर्कजाल की भांति उलझे हुए मनुष्य के मन की जटिलताओं को सुलझाया है, सांसारिक व्यामोह से उसे मुक्त कर मानवीय संवेदनाओं की अनुभूति से उसे सम्पन्न बनाया है, और इस प्रकार स्वस्थ, अनासक्त एवं समर्पित व्यक्ति का तथा शुद्ध आचारवाले समाज का निर्माण किया है।

यह वर्ष, श्री स्वाध्यायी संघ के आद्यसंस्थापक, सुदीर्घ विचारक, राजस्थान केसरी, श्रद्धेय गुरुवर्य श्री पन्नालाल जी म. सा. का जन्मशती वर्ष होने से इस क्षेत्र की जनता के लिए मील का पत्थर साबित हुआ है। वहीं हमारे चरित-नायक स्वाध्याय-शिरोमणि श्रद्धेय गुरुवर्य श्री सोहनलाल जी म. सा. अपने जीवन के ७७ वें वर्ष में प्रवेशकर अपने महिमा-मंडित जीवन से हमें सार्थक आशीर्वाद प्रदान कर रहे हैं।

पूज्य गुरुदेव के अनुयायी भक्तों की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि उनके अब तक के प्रकाशित व अप्रकाशित काव्यात्मक कथानकों को—जो लगभग ३०० से भी अधिक हैं—क्रमशः प्रकाशित कराया जाय ताकि पाठक उनसे समुचित लाभ उठा सकें एवं साहित्य के अनुसंवित्सुओं के लिए भी पथचिह्न बन सकें। वर्तमान विषैले वातावरण में युवकों को सत्साहित्य उपलब्ध नहीं होने से वे घटिया एवं चरित्र हन्ता साहित्य पढ़कर अपना समय नष्ट करते हैं, उन्हें भी व्यवहार व धर्मनीति परक साहित्य सुलभ कराना भी इसका एक उद्देश्य रहा है।

इसी भावना के अनुसार पूज्य गुरुदेव श्री के कथानकों को क्रमशः प्रकाशित करने की योजना बनी। फलस्वरूप सोहन-काव्य-कथा-मंजरी की यह सौरभ आपके समक्ष प्रस्तुत है।

इस संकलन को तैयार करने में हमें ओजस्वी वक्ता, प्रखर प्रतिभा के धनी, श्रद्धेय वल्लभ मुनि जी म. सा. का हार्दिक सहयोग मिला जिन्होंने आद्योपान्त सभी कथानकों को पढ़कर आवश्यकीय सुझावों से लाभान्वित किया है। साथ ही इसकी पाण्डुलिपि तैयार करने में सुश्री कल्पना कुमारी चौपड़ा विजयनगर ने पर्याप्त श्रम किया है, तदर्थ हम हृदय से आभारी हैं। श्रीमान् चन्द्रसिंह जी सा. बोथरा के अत्याग्रह से फ्रैण्ड्स प्रिन्टर्स जयपुर ने इसका शीघ्र ही मुद्रण-कार्य सम्पन्न किया अतः वे भी धन्यवादार्ह हैं।

आशा है पाठकगण इस काव्य-कथामाला से लाभ प्राप्त कर जीवन में नैतिकता विकसित कर सकेंगे। इसी विश्वास से—

मिलापचंद जामड़
मंत्री
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी
संघ, गुलाबपुरा

विजयनगर
आषाढ़ी चातुर्मासी
सं. २०४८

भूमिका

प्राचीनकाल से ही कथा काव्य का मूलाधार रही है। कथा का औत्सुक्य और कुतूहल-तत्त्व श्रोता या पाठक को बांधे रखता है। उससे जटिल से जटिल तत्त्व को, गूढ़ से गूढ़ सिद्धान्त को सरल और मनोरंजक बनाकर जन-मानस तक संप्रेषित किया जा सकता है। वेद, पुराण, उपनिषद्, आगम, रामायण, महाभारत आदि में कथाएँ विभिन्न रूपों में अनुस्यूत रही हैं और ये सभी ग्रन्थ आज तक साहित्य की विविध विधाओं के स्रोत बने हुए हैं।

भारतीय काव्य-परम्परा में प्रमुखतया दो तरह के कवि हुए हैं—एक राज्याश्रित और दूसरे जनाश्रित। जनाश्रित कवि 'स्वान्तः सुखाय' रचना करते रहे हैं। उनके लिए काव्य का प्रयोजन पैसा, पद, प्रभुता नहीं रहा है। लोक-कल्याण और सर्व मंगल ही उनके काव्य का मूल स्वर और प्रयोजन रहा है। सन्त कवि इसी कोटि में आते हैं।

पूज्य प्रवर्तक श्री सोहनलालजी म० सा० इसी उदात्त सन्त-परम्परा के सात्विक मनीषी और आशुकवि हैं। कविता उनके लिए परिश्रम नहीं, पूजा है, कठिन साधना नहीं, सहज स्फुरित भावना है।

'सोहन काव्य-कथा-मञ्जरी भाग-२' में प्रवर्तक श्रीजी की ३४ काव्य-कथाएँ संकलित हैं। इनमें कथा का सूत्र बहुत पतला और महीन होते हुए भी वह निर्बल नहीं है। उसके इर्द-गिर्द कल्पना, चमत्कृति, अलंकरण आदि का लवाजमा नहीं है। वह अपने आप में सीधा, सपाट है और जिन जीवन-मूल्यों को, नैतिक उपदेशों को, धार्मिक तत्त्वों को कवि जनसाधारण तक संप्रेषित करना चाहता है, अपने सीधे-साधे तौर-तरीके से वह संप्रेषित कर देता है।

संकलित रचनाओं में व्यक्ति, परिवार और समाज के लिए जो आदर्श प्रस्तुत किये गये हैं, वे सर्वहितकारी हैं। स्थान-स्थान पर कवि ने स्पष्ट किया है—" 'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, कहे सदा हितकार।" व्यक्ति का जीवन केवल देह नहीं है, देह तो नश्वर है। इसे "समझो मिश्री डली सम, पानी बनकर गल जावे।" मानव जीवन की सार्थकता इस बात में है कि वह धर्म-साधना में तप कर हीरा बने। इसके लिए चाहिये सम्यक्त्व बोध, सुदेव, सुगुरु और सुधर्म की शरण। अहिंसा, संयम और तप रूप धर्म को जीवन में आचरित कर व्यक्ति अपनी आत्मा की सुषुप्त शक्तियों को जागृत कर परमात्म शक्ति से साक्षात्कार कर सकता है। इस साक्षात्कार में बाधक तत्त्व हैं—विषय और कषाय। विषय अर्थात् इन्द्रियों की भोगवृत्ति और कषाय अर्थात् क्रोध, मान, माया, लोभादि विकारी प्रवृत्तियाँ। कषायों के वशीभूत होकर ही इन्द्रियाँ भोगासक्त होती हैं

श्रौर अपना उपयोग खो बैठती हैं। जब मन सत्गुरु का सम्पर्क पाकर विवेक जागृत करता है, तब वह अन्तर्मुखी हो विशुद्ध चेतना से तादात्म्य स्थापित कर पाता है। इसी साधना-क्रम में कवि सोहन ने सेवा (दीनों की सेवा : तीर्थ का फल), प्रेम (जहाँ प्रेम है वहाँ क्षेम), श्रद्धा (भक्त नामदेव, अरणक श्रावक), सत्य (सत्य की महिमा), अहिंसा (सबको प्यारे प्राण), मित्रता (तीन मित्र : कौन खोटा, कौन खरा), कर्तव्य परायणता (कर्तव्यवीर शूद्रक), नियमबद्धता (नियमपालन) आदि सद्वृत्तियों को विकसित करने पर बल दिया है।

व्यक्ति का विकास परिवार पर निर्भर है। आदर्श परिवार वह होता है, जिसमें परस्पर प्रेम, समर्पण, सहयोग, सहकार और एक-दूसरे के लिए त्याग करने की तत्परता हो। परिवार में विघटन का मुख्य कारण धन के प्रति आसक्ति है। संकलन की अधिकांश कविताओं में (सत मत छोड़ो हे नरां, पाप का बाप : लोभ, सच्ची सामायिक) धनासक्ति की निरर्थकता और धर्म की सार्थकता का रहस्य बड़ी खूबी के साथ व्यंजित किया गया है। 'छहों दिशा की पूजा' केवल स्थान पूजा नहीं है, वह तो भाव पूजा है। पूर्व दिशा है—माता-पिता, दक्षिण दिशा है—भगिनी-बन्धव, पश्चिमी दिशा है—सास-ससुर, उत्तर दिशा है—शांति-मित्र, ऊर्ध्व दिशा है—गुरुजन और अधो दिशा है—नौकर-चाकर। इन सबके प्रति स्नेह, सम्मान, सुखी जीवन का आधार है।

आदर्श समाज सहयोग, समन्वय और समता पर आधारित है। ऐसे समाज में धर्म दीन-दुःखियों की सेवा का अंग बनकर जीता है, सामायिक स्वधर्मी की वत्सलता बनकर सार्थक होती है, तीर्थ का फल केरल के चमार रामू को मिलता है, जो किसी तीर्थ में स्नान नहीं करता वरन् परिश्रम व सच्चाई से संचित अपना सर्वस्व जरूरतमन्द की सेवा में समर्पित कर देता है। यहाँ अशुद्ध आय पर प्रतिष्ठा के महल नहीं खड़े होते वरन् शुद्ध आय ही संस्कृति का मूल आधार बनती है। इस प्रकार व्यक्ति, परिवार और समाज के लिए मार्गदर्शक नीति तत्त्व इन कविताओं में गूंथे हुए हैं।

संकलित कविताओं की एक अन्य विशेषता है—लोक-संगीतात्मकता। यद्यपि इन रचनाओं में प्रमुख छन्द दोहा है, पर वह छोटी-बड़ी लावणी, अष्टपदी, कोरो काजलियो, गवरल ईसरजी, तावड़ो, ख्याल, मांड, द्रोण, राधेश्याम रामायण जैसी तर्जों व रागों में आबद्ध होकर शास्त्रीय चिन्तन को लोक हृदय से जोड़ने में माध्यम बना है। संक्षेप में सहजता, सरलता और सात्विकता 'सोहन काव्य-कथा' की अन्यतम विशेषता है।

—डॉ० नरेन्द्र भानावत
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, राजस्थान वि० वि०, जयपुर

सोहन-काव्य कथा-मञ्जरी

भाग—२

कथा—क्रम

१ संसार : सम्पद्-विपद् का परिवार

(तर्ज—लावणी खड़ी)

सम्पद् विपद् दो बहनें हैं, मत फूलो पाकर सम्पत्ति सार ।
फँसे विपत्ति में प्राणी की, नित चित्त से करलो सार संभार ।।टेर।।

सरस्वती का पुत्र विप्र एक, शुद्ध संस्कृत का ज्ञाता था ।
किन्तु लक्ष्मी सदा कुपित थी, नहीं पेट भर पाता था ।।
एक समय विप्राणी बोली, नाथ अर्ज यह सुन लेना ।
क्यों इतना नित कष्ट उठाते, नृप से दुःख सुना देना ।।
धारापुरी के भूप भोज हैं, जग में अति उत्तम दातार ।।१।।

सुन के बात विप्र यों सोचे, कैसे भूप के जाऊँ पास ।
सरस्वती का हूँ मैं बेटा, समझे नृप लक्ष्मी का दास ।।
अतः मांगने को वहाँ जाना, समझूँ इज्जत होवे नाश ।
नहीं जाना ही सबसे अच्छा, कही बात नारी को खास ।।
नारी कहती नृप है कैसा, सुनकर दिल में करो विचार ।।२।।

होगा वहाँ सम्मान आपका, गुण ग्राहक हैं पृथ्वी पाल ।
करे पंडितों का वह आदर, देखे उसको करे निहाल ।।
सुनी विप्र झट बात मान कर, आया है नृप द्वारे चाल ।
द्वारपाल कहे रुको यहाँ पर, पहले भूप को कहदूँ हाल ।।
अपना परिचय दे दो मुझको, जाकर कह दूँ सब ही सार ।।३।।

कहा विप्र ने कहो यह जाकर, बंधव मिलने हित आवे ।
आज्ञा हो तो आगे आवे, नहीं तो वापिस घर जावे ।।
द्वारपाल जा सभी सूचना, भूपति आगे दरसावे ।
सुनते ही आने की आज्ञा, नरपति मुख से फरमावे ।।
भूप खड़ा हो मिला प्रेम से, बैठाया देकर सत्कार ।।४।।

पूछे भूपति कह दो भ्राता, मौसीजी का क्या है हाल ।
विप्र कहे मौसी तो गिर गई, जब से याद हुए महिपाल ।।
दर्श आपके होते ही, प्राणान्त हो गई वह तत्काल ।
श्मशान भूमि में उन्हें जलाने, जाऊँ यहाँ से जल्दी चाल ।।
चाल चलावा अच्छा करना, बार-बार कहते भूपाल ।।५।।

सुनी भूप ने सहस्र मोहरें, देय विप्र को किया निहाल ।
लेकर मोहरें नमन करी वह, वापिस आया घर पर चाल ।।
सभी सभासद विस्मित होकर, देख रहे हैं यह सब हाल ।
शंका सबके दिल में हो रही, कैसे होवे शमन विचार ।।६।।

हिम्मत करके एक पुरुष ने, करी भूप से यों अरदास ।
कैसे आपका बंधव है यह, यही हमारी इच्छा खास ।।
भूप कहे हम सबका रहना, एक भवन संसार निवास ।
भूल गये हो धन मद में तुम, जो कर्तव्य है निज का खास ।।
सम्पद् आपद् दो बहनों का, जगत् समझ लो है परिवार ।।७।।

कर्मोदय से केई प्राणी, अभावग्रस्त हो पा रहे त्रास ।
नहीं पास में क्षुधा मिटाने, खातिर मिलता एक भी ग्रास ।।
तन ढकने को तन के ऊपर, वस्त्र तन्तु भी नहीं है पास ।
बुरी तरह से यापन करते, अपना जीवन रह कर दास ।।
ऐसी अवस्था देख नेत्र से, फिर भी नहीं ले सार संभार ।।८।।

सम्पत्तिशाली बने हुए हो, समझो क्या है जीवन काज ।
सुनकर सब वृत्तान्त सभासद्, कहे धन्य हैं हे नरराज ।।
धन मद में कर्तव्य विमुख था, जगा दिया है सकल समाज ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, करलो सेवा देकर साज ।।
दीन दुःखी का ध्यान रखो, नित पाकर सम्पत्ति लेलो सार ।।९।।

२ | जहाँ प्रेम : वहाँ क्षेम

दोहा—सुमतिनाथ भगवान् है, सुमति के दातार।
भव-भव के चक्कर मिटे, ले ओ दिल में धार ॥१॥

यदा सुमति घट में जगे, तब पावे मन क्षेम।
क्रोध क्लेश को नष्ट कर, पैदा करदे प्रेम ॥२॥

(तर्ज—राधेश्याम)

एक अद्भुत घटना कहता हूँ, अब सुनो हाल सब ही नर-नार।
द्वेष कहाँ तक अधम बनाता, तुड़वा देता कैसे प्यार ॥१॥

स्वार्थ भावना आते ही, नहिं आगे पीछे करे विचार।
कौन किसे में क्या कहता हूँ, सब ही देता बात विसार ॥२॥

उस समय तनिक सा मोड़ लेय, मन समता का ले ले आधार।
तब तो बिगड़ी बातों में भी, हो जावेगा खूब सुधार ॥३॥

एक ग्राम का वासी था, इक नाथू नामक मालाकार।
दो लड़के थे सुक्खा मूला, कृषि कार्य में भी हुशियार ॥४॥

पाणिग्रहण दोनों का करके, पाया दिल में हर्ष अपार।
अल्प दिनों पश्चात् मात-पितु, हो गये दोनों काल हवाल ॥५॥

अब आपस में चक-चक होते, घर में बढ़ गया भारी क्लेश।
अलग-अलग हो गये हैं दोनों, दिल में आ गया पूरण द्वेष ॥६॥

खेती की करली है पांति, लीने कूप के दिन भी बांट।
आपस में नहीं बोले मुख से, मन में आ गई पूरी आंट ॥७॥

दोहा—एक दूसरे के बढ़ा, ईर्षा का जब पूर।
बढ़ती देखे जब कभी, बल जल होवे धूर ॥३॥

एक वक्त फागुन महीने में, लघु बन्धव ने किया विचार।
खेती धान की सूख रही है, और नहीं मेरे आधार ॥८॥

अभी कूप यों खाली पड़ा है, नहीं भाई के आवे काम ।
जाकर सत्वर चड़स लगा के, क्यों न पिलादूँ खेत तमाम ।।९।।

उस ही क्षण ला चड़स कूप पर, लगा खींचने वह जिस बार ।
ज्येष्ठ भ्रात को पता लगा, वह दौड़ा आया वहाँ तत्कार ।।१०।।

देख चड़स चलता कूए पर, बोला मुख से आँख निकाल ।
लड़ झगड़ कर काटी रस्सी, चड़स फैंक कीना बेहाल ।।११।।

नहीं जानता मेरे दिन हैं, तू नहीं कूप पर आ सकता ।
चाहे सारी साख जले पर, जल इसका नहीं पा सकता ।।१२।।

करके झगड़ा दोनों भाई, अपने घर का मार्ग लिया ।
इस व्यवहार से छोटा भाई, दिल मांही अति खीज गया ।।१३।।

दोहा—यह मेरा बंधव नहीं पूरा दुश्मन जान ।
अब मौका पाकर यहाँ, ले लूँ इसके प्राण ।।४।।

मध्य निशा में लिया कुल्हाड़ा, आया सुक्खा के घर द्वार ।
छिपा भीत का लेय सहारा, वाहर निकले यह इन्तजार ।।१४।।

तभी नींद खुल गई सुखा की, मन में आया अति विचार ।
व्यथित देखकर पतिदेव को, पूछे क्या चिन्ता है नार ।।१५।।

आज अनर्थ हो गया है मुझसे, अब जीना मेरा निस्सार ।
नहीं होने का किया कार्य मैं, भूला क्रोध में ज्येष्ठ विचार ।।१६।।

ऐसी क्या हो गई भूल जो, दिल में करते दुःख अपार ।
वीती घटना सुना रहा यों, सुक्खा नयन से अश्रु डार ।।१७।।

क्या पानी कम होता कूप का, क्यों बुद्धि में हुआ विकार ।
लघु वन्धव को गाली दी, और दीना उसका काम बिगाड़ ।।१८।।

नहीं चाहिये मुझको खेती, नहीं चाहिये जल की बार ।
अभी जाय कह दूँ मैं उसको, यह सब खेती कूप सभार ।।१९।।

दोहा—माफी मांगू कृत्य की, जाकर बन्धव पास ।
मुझ अपराधी को क्षमा, कर देगा दिल आस ।।५।।

नारी बातें सुन बन्धव की, मुन्ना का दिल पिघल गया ।
कैसा दुष्ट हत्यारा हूँ मैं, सोच कुल्हाड़ा फेंक दिया ।।२०।।

ज्येष्ठ भ्रात है पिता तुल्य, मैं उसे मारन [illegible] आया ।
[illegible] में यहाँ पाप है, क्या [illegible] ही करवाया ।।२१।।

लघु बन्धव यह सोच रहा, उस समय ज्येष्ठ बाहर आया।
बन्धव-बन्धव कहता मूला, चरणों मांही लिपटाया ।।२२।।

उठा उसे छाती चिपका कर, निज गलती स्वीकार करी।
मूला बोला मैं अपराधी, बात कही सब खरी-खरी ।।२३।।

हो गई कालिमा साफ हृदय की, प्रकट हो गया स्नेह सवाय।
प्रेम भाव हो गया अनुपम, आई सुमति दिल के मांय ।।२४।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, तजो क्लेश सुख होय अपार।
प्रेम बिना इस जग में जीना, कलंक रूप मानव अवतार ।।२५।।

दोहा—दो हजार पच्चीस, पोष सुद दशमी रविवार।
शहर मेड़ते आ गये, विचरत ठाणे चार ।।६।।

३ भक्त नामदेव

(तर्ज—लावणी अष्टापदी)

भक्त हो सच्चा जग मांही, कमी क्या उसके है भाई ॥टेर॥
भक्त एक नामदेव नामी, साधन की है घर में खामी ।
भजे है नित अन्तर्यामी, नहीं अन्याय अर्थ कामी ॥

दोहा :— नार सुशीला है सही, सरल शान्त सुखदाय ।
जितने पैसे मिले नीति से, घर का काम चलाय ।
सदा रहे सादा वेश मांही ॥१॥

वहीं पर रहते धन स्वामी, भागवत विप्र एक नामी ।
गुणावली नार सुयश पामी, भागवत विप्र एक नामी ॥

दोहा :— सुशीला अरु गुणावली, दोनों में है स्नेह ।
आपस में लख एक-एक के, दूधा बरसे मेह ॥
स्नेह का लक्षण दरसाई ॥२॥

एक दिन भागवत की नारी, देखकर वहिन व्यथा सारी ।
पारस दे कहे सुनो म्हारी, मिटवो दरिद्रता सारी ॥

दोहा :— जितना लोहा हो उसे, कंचन लेवो बनाय ।
घर के दुख को मेटो, अपने संग ले जाय ॥
सुशीला लेकर घर आई ॥३॥

बनाते सोना लख लीनी, भक्त ने मणि कर में लीनी ।
कहे क्यों उलझे रंग भीनी, रमा यह सबको दुःख दीनी ॥

दोहा :— अतः मणि को फेंक दूं, तटिनी में ले जाय ।
चन्द्रभागा में फेंक मणि, फिर कही नार से आय ॥
बात सुन मन में दुःख पाई ॥४॥

नारी को आकर कह दीनी, बात सुन दुख मांही भीनी ।
कहे यह क्या उनने कीनी, अमूल्य मणि कैसे फेंक दीनी ॥

दोहा :— कही पति से बात यह, सुन कोपा तत्काल ।
कैसे फेंक दी उसने मणि को, समझा मैं नहीं हाल ।।
मांगलूं उनसे मैं जाई ।।५।।

भागवत चल करके आया, मणि दो मुख से दरसाया ।
नदी में भेंट कर आया, भक्त ने ऐसे फरमाया ।।

दोहा :— लोग इकट्ठे हो गये, सुनकर सारा हाल ।
कहे दबा ली इसने, मणि को करे असत पंपाल ।।
सभी को रहा है भरमाई ।।६।।

आपस में करे बात ऐसी, वक्त यह आ गई है कैसी ।
भक्त बन करे है ठग जैसी, मणि रख करे बात ऐसी ।।

दोहा :— भागवत भी कह रहा, करो न ऐसा काम ।
मणि आपको देनी होगी, समझो हिए तमाम ।।
दबेगी हरगिज यह नांही ।।७।।

भक्त कहे डाली नदी के मांय, चलो वहां तटिनी में मिल जाय ।
भागवत कहे मुझे बहकाय, गई वह जल में कैसे पाय ।।

दोहा :— भक्त सभी को साथ ले, नदी किनारे आय ।
बहती जल की धार में, वह डूबकी सद्य लगाय ।।
पहुँच गया जल के तल मांही ।।८।।

मुट्ठी भर कंकर ले आया, कहे ये मणिये ले भाया ।
लोग कहे दिमाग चकराया, कंकर को मणिये बतलाया ।।

दोहा :— लोहे की मंगवाय के, दीना त्वरित अड़ाय ।
कंकर सब पारस बने, कंचन लख विस्माय ।।
भक्त की जय जय सब गाई ।।९।।

श्रद्धा हो जिसके दिल मांही, कमी का काम वहां नांही ।
मनुष्य क्या देव चरण मांही, गिरे नित स्वर्गों से आई ।।

दोहा :— संशय इसमें है नहीं, सुनो लगाकर कान ।
जग जंजाल से निकल सज्जनो, भजो सदा भगवान ।।
छोड़कर तृष्णा दु:खदाई ।।१०।।

श्रवण कर कथा ध्यान दीज्यो, सुकृत की गठड़ी संग लीज्यो ।
बुराई मन से तज दीज्यो, भावना उज्ज्वल कर लीज्यो ।।

दोहा :— 'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, सदा रहा चेताय ।
आश्रव तज संवर में आवो, जीवन सफल वनाय ।।
मिलेगी मुक्ति सुखदाई ।।११।।

□ □ □

४ लक्ष्मी का मंत्र

(तर्ज—जम्बू कह्यो)

चतुर नर सांभलो, शिव सम्प सदा सुखकार ॥टेर ॥

कौशम्बी नगरी भली, तिहां सेठ बसे धन सार ॥
रमा रमण करती सदा, सब सेठां में सरदार ॥१॥

सुन्दर रूप सुहावणी, पति वल्लभ पदमा नार ।
दानशील शिरोमणि, जिन पट् गुण लीना धार ॥२॥

मोती, माणक, लाल, जवाहर, गुणवन्त बालक चार ।
प्रेम घणो सब मिल रहे, नहीं लोपे कुल की कार ॥३॥

यौवन वय में देखने, यों कीनों तात विचार ।
सुन्दर कन्या लख इन्हें, अब परणाऊं इण वार ॥४॥

इभ्यपति घर देखने, दिये तीन पुत्र परिणाय ।
मंगल महोत्सव खूब करी, रहा सेठ हृदय हर्षाय ॥५॥

बहुयें धन मद में छकी, नहीं सेवा करे है लिगार ।
सेठाणी लग सेठ से, यों दीनी अर्ज गुजार ॥६॥

घर में कमी नहीं द्रव्य की, नहीं चावे धन भण्डार ।
गुणवन्ती कन्या देखने, परणावो चौथा कुमार ॥७॥

वात सुनी जब सेठ ने, दिया भेज मित्र तत्काल ।
योग्य देख सम्बन्ध किया, पुनः कह दीना सब हाल ॥८॥

निर्धन घर की सुलक्षणी, कंवरी ब्याह लावे घर द्वार ।
सेठाणी अति हर्ष से, तब बांटी मिठाई अपार ॥९॥

रात दिवस सेवा करे, नहीं आलस तन पे लिगार ।
सास ससुर सेवा लगी, कहे गुणवन्ती बहू सार ॥१०॥

सुन कर सब ईर्षा भरी, यों दिल में करे है विचार ।
अब शामिल रहणो नहीं, कहे सुण सीख्यो भरतार ॥११॥

द्वेष बढ़ा घर में लखि, सोचे लक्ष्मी चित्त मंझ र ।
चेता कर मध्य रात में, जाऊं छोड़ अन्य आगार ॥१२॥

सेठ भवन में आयने, कहे सेठ सुनो इस बार ।
तजकर तुझको जा रही, मैं रहूँ अन्य आगार ॥१३॥

सेठ कहे कर जोड़ ने, क्यों त्यागो मुझे इस बार ।
रमा कहे थारे सेठ जी, घर में फूट घूसी है अपार ॥१४॥

मीठ स्वर में सेठ जी, तब बोले हूँ लाचार ।
कारण सुनकर क्या कहूँ, अब कीजे जैसा विचार ॥१५॥

सेठ वचन सुन लक्ष्मी, बोली हर्षित हूँ इस बार ।
छोड़ मुझ वर मांगिये, नहीं होऊं मैं इन्कार ॥१६॥

बुद्धि काम करे नहीं, म्हारी क्या मांगू इस बार ।
अवधि दो दिन रात री, सुन दी लक्ष्मी उस वार ॥१७॥

प्रातः गया निज हाट पे, यों मन में करे है विचार ।
लक्ष्मी गया के बाद में, कुछ पूछे सार सभार ॥१८॥

भोजन कर सब कुटुम्ब को, बैठाया अपने पास ।
लक्ष्मी जा रही घर थकी, बोली मांगो वर एक खास ॥१९॥

अनुक्रम से पूछे तदा, कहे निज-निज चाह अनुसार ।
स्वार्थ वल्लभ जगत में, नहीं सोचे अन्य लिगार ॥२०॥

छोटी बहू से पूछियो, तब बोली यों तत्काल ।
लक्ष्मी से वर माँगिये, सब में सम्प रहे हर बार ॥२१॥

सेठ सुणी दिल सोचियो, बहू बुद्धितणी भण्डार ।
वर देसी वह एक ही, तुम मांगो स्वेच्छा धार ॥२२॥

रात समय जा सेठजी, सोने अपने शयनागार ।
मध्य निशा में आ कहे, लक्ष्मी वर मांगो तत्काल ॥२३॥

सेठ सुणी वर मांगियो, दीजे सम्प महा सुखकार ।
'तथास्तु' कही लक्ष्मी जी चाली, ढूंढण अन्य आगार ॥२४॥

अन्वेषण करती फिरे, लक्ष्मी देखे घर घर द्वार ।
किन्तु फूट बिन घर नहीं, थक बैठी करे यों विचार ॥२५॥

वापिस जाऊं सेठ के, वहां दीना सम्प का दान ।
लक्ष्मी आ आवाज दी, सेठां रक्खो मेरा मान ॥२६॥

कहे सेठ सुण लक्ष्मी, तुझको कौन यहाँ पे बुलाई है ॥टेर॥

अब मेरे घर नहीं चाहिये, क्यों तू फिर कर आई है ।

निज की तज पर की को बंछे, परिणाम महा दुखदाई है।
अपनी समझ विश्वास किया, आखिर में की धुर्ताई है।
अतः जगत में नाम चंचला, प्रसिद्ध पद तू पाई है ।।कहे ।।१।।

कमला कहे मुझ वास यही घर, और जगह नहीं होय गुजार ।।टेर।।
क्लेश बढ़ा घर-घर के अन्दर, देख फटे है मेरा जिगर।
सम्प जहाँ पर मेरा वासा, इस घर को मैं दीना वर ।।
अतः यहाँ से नहीं जाऊंगी, कहूँ शपथ पति की खाकर।
सब विधि करके तसल्ली लीनी, कमला को घर के अंदर ।।२।।

उपदेश—सुनो सज्जनो सम्प जगत में, कैसा काम बनाती है ।।टेर।।
सम्प जहाँ पर है देखो, दासी बन लक्ष्मी आती है।
दुःख द्वेष अरु दन्त कलह को, जड़ से दूर हटाती है ।।
मनोभाव को कर विशुद्ध, दैत्यों से देव दिखाती है।
'प्राज्ञ' चरण रज 'सोहन' मुनि, देवों को चरण गिराती है ।।३।।
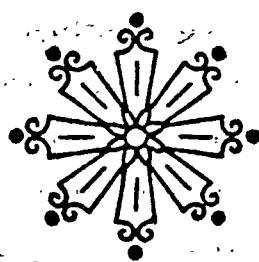
५ सोने का डला बनाम माँ का लाल

(तर्ज—कोरो काजलियो)

यो स्वार्थियो संसार, सुनियो नरनारी ।
रहे ज्ञानी सन्त पुकार, लिज्यो दिलधारी ।। टेर ।।

एक शहर मांही बसे, श्रावक श्रद्धावान सु. ।
ज्ञानचन्द अभिधान है, सरल भाव गुणवान ।। लि. ।। १ ।।

घर मांहि तीन ही, खुद माता घरनार सु. ।
और नहीं परिवार में, पर शांति नहीं लिगार ।। लि. ।। २ ।।

सास बहू में हो रहा, नित प्रति कलह अपार सु. ।
ज्ञान हृदय में सोचता, कैसे करूं सुधार ।। लि. ।। ३ ।।

नारी अहो निश यों कहे, अलग करो घर बार सु. ।
अब शामिल रहस्यूं नहीं, इण सासूजी की लार ।। लि. ।। ४ ।।

सुनते-सुनते तंग हो, कहे ज्ञान उस बार सु. ।
तेरा कहना मानकर, अलग होऊं इस बार ।। लि. ।। ५ ।।

पर मेरे दिल में है सही, मोटा एक विचार सु. ।
खोल अभी तुझको कहूँ, लीजे हृदय मंझार ।। लि. ।। ६ ।।

अलग कभी हो जावे तो, पर एक चीज माँ पास सु. ।
सोना को मोटो डलो, बस या ही अटक है खास ।। लि. ।। ७ ।।

आज अलग यदि हो गये, फिर नहीं आवे हाथ सु. ।
इनकी मर्जी हो जिसे, दे देगी सच्ची बात ।। लि. ।। ८ ।।

नारी सुन चौकन्नी हो, बोली यों तत्काल सु. ।
सुनी सुनाई कह रहे, या देखा है वह माल ।। लि. ।। ९ ।।

ज्ञान कहे कई वक्त में, लीना नजर निहाल सु. ।
पर ऐसे नहीं पायेगी, सेवा विन सच हाल ।। लि. ।। १० ।।

तब नारी ऐसे कहे, मैं रहूंगी शामिल माय सु. ।
कलह कभी करस्यूं नहीं, लूं सेवा को अपनाय ।। लि. ।। ११ ।।

अब घर मांही शान्ति का, हो गया है साम्राज्य सु. ।
सेवा अच्छी हो रही, दुःख गया सब भाज ।। लि. ।। १२ ।।

चन्द दिनों के बाद ही, वृद्धा कर गई काल सु. ।
संसारी सब काम से, निपट गया तत्काल ।। लि. ।। १३ ।।

एक दिन नारी ने कही, पति देव से बात सु. ।
सोने का कहाँ है डला, दिखलाओ साक्षात् ।। लि. ।। १४ ।।

पति कहे देखा नहीं, दिखलादूं साक्षात् सु. ।
मैं खुद सोने का डला, हूँ उसका अंगजात ।। लि. ।। १५ ।।

मुझ से बढ़कर कौन है, इस जगति के मांय सु. ।
तेरे लिये तू सोच ले, मां से ही मुझको पाय ।। लि. ।। १६ ।।

जान गई सब भेद वह, हर्षित हुई अपार सु. ।
घर का सब झंझट मिटा, दीनी शिक्षा सार ।। लि. ।। १७ ।।

ज्ञानी, ध्यानी, तपेश्वरी, मुनिवर वहां गुणवान सु. ।
आया है इन शहर में, सुनी बात पुण्यवान ।। लि. ।। १८ ।।

वाणी सुन संयम लियो, कियो आत्म कल्याण सु. ।
भव्य भ्रात अब लीजिए, परभव को सामान ।। लि. ।। १९ ।।

'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, चेतावे हर बार सु. ।
साधु, श्रावक पणो आदरो, पायो नर अवतार ।। लि. ।। २० ।।

६ | कर्तव्यवीर शूद्रक

(तर्ज – हो भवियण मांगलिक शरणा चार)

ज्ञानी, ध्यानी, धर्मात्मा हो, भवियण सारे आतम काज ।
कर्तव्य पर दृढ़ मानवी हो, भवियण पावे शिवपुर राज ।। १ ।।

कि श्रोता सांभलो हो, भवियण चरित्र बड़ो सुखकार ।। टेर ।।

एक शहर का राजवी हो, भवि· शूद्रक नामा भूप ।
शूरवीर रणधीर है हो, भवि. दाता रूप अनूप ।। २ ।।

एक समय नृप सामने हो, भवि. आया सभा मंझार ।
अन्य स्थान से चाल के हो, भवि. दुखिया राजकुमार ।। ३ ।।

देख उसे नृप पूछियो हो, भवि. कौन कहां से आय ।
वह बोला आया यहां हो, भवि. दूँ सब भेद बताय ।। ४ ।।

क्यों आया निज की कहूँ हो, नरपति पेट भरण के काज ।
रक्खो नौकर राज में हो, भवि पाऊं आपको साज ।। ५ ।।

सुनकर भूपति यों कहे हो, कंवरजी वेतन कितना चाय ।
कंवर कहे लूं पांच सौ हो, नरपति मोहरे नित प्रति पाय ।। ६ ।।

इतनी वेतन किस लिये हो, कंवरजी तभी करूं दरसाय ।
भुजा दोय तलवार की हो, नरपति तनखा इतनी चाय ।। ७ ।।

राज इन्कारी करी हो, भवि. हो गया कंवर उदास ।
देख मंत्री गण बोलिया हों, नरपति रखिये अपने पास ।। ८ ।।

बात मान नृप ने दिया हो, भवि द्वारपाल का स्थान ।
पाकर मोहरें पांच सौ हो, भवि. करता नित प्रति दान ।। ९ ।।

घर में खर्चा हो वही हो, भवि. रखता अपने पास ।
छोटा कुटुम्ब है पास में हो, भवि. पुत्र पत्नी अरु खास ।। १० ।।

कर्तव्यनिष्ठ लख कर इन्हें हो, भवि. मंत्री राणी राय ।
सभी प्रसन्न होकर कहे हो, भवि. अच्छा पुरुष मन भाय ।। ११ ।।

एक दिन यों घटना हुई हो, भवि. मध्यरात के मांय ।
करुण रुदन नृप कान में हो, भवि. बार-बार रहा आय ।। १२ ।।

उस ही क्षण आज्ञा करी हो, भवि. द्वारपाल बुलवाय ।
निगाह करो जाकर अभी हो, भवि. रुदन कौन मचाय ।। १३ ।।

आज्ञा पा तत्काल ही हो, भवि. चला उधर की ओर ।
ज्यों-ज्यों आगे जा रहा, भवि. त्यों-त्यों सरके ठौर ।। १४ ।।

पीछे नृप मन सोचियो हो, भवि. रात अंधेरी माय ।
एकाकी को भेज के हो, भवि. काम न ठीक कराय ।। १५ ।।

गुप्त तरीके भूप भी हो, भवि. हो गया कंवर के साथ ।
जो-जो घटना आयगी हो, भवि. देखेगा सब नाथ ।। १६ ।।

शहर छोड़ मन में चला हो, भवि. आया मन्दिर पास ।
मंगला देवी स्थान में हो, भवि. रो रही रम्भा खास ।। १७ ।।

कंवर कहे क्यों रो रही हो, भगिनी बोलो शंका टाल ।
कहाँ बास क्या दुःख है हो, भगिनी कह दो अपना हाल ।। १८ ।।

आँखें पूंछ बोली तदा हो, क. सुन लो मेरी बात ।
राज कोष की हूँ रमा हो, क. सत्य कहूँ अवदात ।। १९ ।।

राजा के आश्रित रही हो, क. पाया सुख अपार ।
अब क्या होगा राज का हो, क. यह है मुझे विचार ।। २० ।।

कंवर कहे कारण कहो, हे देवी, सुनकर करूं उपाय ।
लक्ष्मी कहे दिन सातवें हो, क. मर जावेगा राय ।। २१ ।।

बचने का उपाय हो, हे देवी, कह दो छोड़ विचार ।
देवी कहे करना कठिन हो, क. मत पूछो यह वाय ।। २२ ।।

कंवर कहे संसार में, हे देवी, कठिन कौन सा काम ।
जिसको नर नहीं कर सके, हे देवि ! कह दो खोल तमाम ।। २३ ।।

अगर बचाना चाहते हो, क. तो बच सकता है राय ।
शक्ति धर तुम पुत्र को हो, क. बलि करो यहाँ लाय ।। २४ ।।

मंगला देवी सामने हो, क. तू करके दिखलाय ।
बच सकता है भूपति हो, क. कह के लुप्त हो जाय ।। २५ ।।

सुनकर आया निज गृहे हो, भवि. नारी पुत्र जगाय ।
नारी कहे इस वक्त हो, भवि. किस कारण गये आय ।। २६ ।।

स्वामि भक्ति सुत नेह में हो, भवि. कंवर गया उलझाय ।
कुछ क्षण को नहीं बोल के हो, भवि. दीनी बात सुनाय ।। २७ ।।

सुनकर सुत कहे बात यों, हे पिताजी ढील न करो लिगार ।
नश्वर मेरे देह से, हे पिताजी होता हो उपकार ।। २८ ।।

दुविधा में माता रही हो, भवि. पुत्र मोह के मांय ।
पुत्र आग्रह देख के हो, भवि. माता हिम्मत लाय ।। २९ ।।

तीनों वहाँ से चल दिये हो, भवि. देवी मन्दिर आय ।
शूद्रक की जय बोल के हो, भवि. दीना शीश उड़ाय ।। ३० ।।

पुत्र बिना घर शून्य है हो, भवि. कंवर यूं मन में लाय ।
अपना शीश उतार के हो, भवि. देवी चरण चढ़ाय ।। ३१ ।।

पति पुत्र को देख के हो, भवि. नारी ली तलवार ।
जिन्दा रहे हम भूपति हो, भवि. दीना शीश उतार ।। ३२ ।।

सब घटना नृप देख के हो, भवि. विस्मय मन में लाय ।
मेरे लिये बलि हो गये हो, भवि. मैं रहूँ जग के मांय ।। ३३ ।।

तत्क्षण ली तलवार को हो, भवि. नृप सिर रहा उतार ।
कर ग्रहि देवी यों कहे हो, न. कीजे काम विचार ।। ३४ ।।

नृप बोला क्या कर रही हो, दे लो मुझ बलि इस बार ।
इनके बिन जिन्दा रहूँ हो, दे. नहिं यह होय लिगार ।। ३५ ।।

उसी ही क्षण जिन्दे किये हो, भवि. पुत्र-पिता अरु नार ।
गुप्त होय नृप आ गया हो, भवि. अपने भवन मझार ।। ३६ ।।

तीनों वहाँ से चाल के हो, भवि. पहुँचे अपने स्थान ।
प्रातः समय जब भूप का हो, भवि. गया कंवर पर ध्यान ।। ३७ ।।

भूप सभा में बैठ के हो, भवि, द्वारपाल बुलवाय ।
कहो घटना सब रात की हो, भवि. तब वह यों दरसाय ।। ३८ ।।

मामूली सी बात थी हो, भवि. दी मैंने समझाय ।
इतनी सी कह बारता हो, भवि. सहज शान्त हो जाय ।। ३९ ।।

नृप सुन मन में जानियो हो, भवि. कितना है गंभीर ।
सारी बात छिपायने हो, भवि. कही किंचित सी धीर ।। ४० ।।

सभी सभासद बीच में हो, भवि. कही भूप सब खोल ।
विस्मित हो जनता सभी हो, भवि. धन्यवाद रही बोल ।। ४१ ।।

उस ही क्षण उसको वहाँ हो, भवि. दत्तक पुत्र बनाय ।
राजपाट सब सौंपने हो, भवि. कार्य भार सम्भलाय ।। ४२ ।।

राजा आतम काम में हो, भवि. लग गया है तत्काल ।
अन्त समय सद्गति लही, हे भवि. लीना जन्म सुधार ।। ४३ ।।

इस दृष्टान्त ये जानिये हो, भवि. कर्तव्य परायण होय ।
ज्ञान-ध्यान अरु धर्म में हो, भवि. रही लगाकर लोय ।। ४४ ।।

वह मानव शिवपुर लहे हो, भवि. समझो सच्चा हाल ।
'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि हो, भवि. जन्म-मरण दे टाल ।। ४५ ।।

दो हजार तैंतीस का हो, भवि. विजयनगर के मांय ।
माघ सुदी १४ भली हो, भवि. दीनी कथा सुनाय ।। ४६ ।।

७ | जवार के मोती
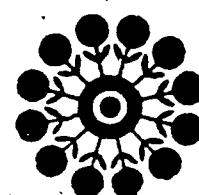
(तर्ज—लावणी खड़ी)

सजग रहो मत खोवो जिन्दगी, यह अवसर नहीं आने का ।
यह मौका है जुवार डालकर, वापिस मोती पाने का ।।टेर।।

एक विप्र ज्योतिष का ज्ञानी, सदा गणित में रहे लवलीन ।
कुछ भी सार रखे नहीं घर की, है पूरा पैसे से दीन ।।
एक दिवस विप्राणी आ कहे, नाथ ! अपन हैं घर में तीन ।
किन्तु पास में साधन नहीं है, इससे पा रही दुःख में पीन ।।

छोटी— भू देव कहे तू क्यों नाहक घबराये,
मेरे पास कमी नहीं मांग तेरे दिल चावे ।
तब नारी बोली घर में अन्न नहीं,
पावे दिन भर में यों ही मिथ्या बात बनावे ।।
बड़ी हो गई छोरी देखो, घर में पैसे नहीं आने का ।।१।।

विप्र कहे मैं कहूँ सोकर, तू समय आगया है अति पास ।
प्रमाद त्यागकर सावधान रह, पूरण होगी तेरी आश ।।
अभी वक्त आने वाला है, जुवार से मोती हो खास ।
शुभ मुहूर्त में काम किया, तो दरिद्र होगा सारा नाश ।।

छोटी— जलते चूल्हे पर जल हंडिया रख देवे
फिर मैं करूं हुंकार ध्यान रख लेवे ।
श्रवण करी हुंकार आलस नहीं सेवे,
वह जुवार डालकर निश्चय मोती लेवे ।।
नारी सोचे घर में पता नहीं है, जुवार के दाने का ।।२।।

जाकर पड़ौसी के घर से लाऊं, जुवार तुलाकर मैं इस वार ।
पाड़ोसन से आ ज्वार मांगी, कह दीना है सब ही सार ।।

पाड़ोसन दे ज्वार सोचे विप्र गणित में है हुशियार ।
मैं भी ध्यान रखू यहां पूरा, निश्चय मोती होंगे त्यार ।।

छोटी— विश्वास नहीं है विप्राणी के दिल मांही यह ।
विप्र कहे सब झूठ सत्य कुछ नांही ।
जुवार लाकर कहे करूं अब कांई ।
हुंकार साथ में डालो विप्र बतलाई ।।
मुहूर्त देख हुंकार किया, तब सोचे इन्धन लाने का ।।३।।

पाड़ोसन हो सावधान, झट ज्वार हंडिया में डाली ।
चन्द समय के बाद उन्होंने, मुक्ता राशि को पाली ।।
विप्र भेंट हित सेठाणी ने, भरली है मुक्ता पाली ।
ले साथ सहेली मंगल गाती, पंडित के घर पर चाली ।।

छोटी— बन गया खीच विप्राणी अति दुःख पाई,
आ विप्र सामने खोटी खरी सुनाई ।
उस समय भेटणा ले सेठाणी आई,
उपहार सामने रखकर सब दरसाई ।।
हुंकार साथ हुशियारी रही, सो मोती बन गये दाने का ।।४।।

यह प्रताप है सभी आपका, जो मैंने मुक्ता पाया ।
सामान्य भेटणा ले आई, अवशेष निधि में धरराया ।।
बात सुनी घबराई दिल में, विप्राणी पड़ पंडित पाये ।
कहने लगी फरमादो, मुहूर्त, वापिस ऐसा कब आये ।।

छोटी— विप्र कहे वह मुहूर्त वापिस नहीं आवे,
सुन करके नारी चित्त में अति घबरावे ।
यों समझ मनुष्य भव बार-२ नहीं पावे,
सुन धर्म करो नर नार मोक्ष सुख पावे ।।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, यह अवसर तिर जाने का ।।५।।

दोहा — इस भू व्योम भुजाब्द में, पोस मास दरम्यान ।
जामोला में जोड़कर, सुना दिया सद् ज्ञान ।।
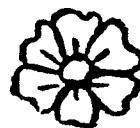
८ | सत मत छोड़ो हे नरा !

दोहा— चिरकालीन अघ झाड़ को, काटन तेज कुठार ।
शासन नायक वीर की, जय बोलो नरनार ।।

(तर्ज—लावणी अष्टपदी)

धर्म से सुख सम्पत्ति पाये, धर्म से लक्ष्मी चल आवे ।
धर्म से विघ्न दूर हो जावे, धर्म से नवनिधि प्रकटावे ।।टेर।।

नगर एक भूपर सुखकारी, मनोहरपुर है मनहारी ।
भूप 'जय' प्रजा दुःख टारी, जगत में शोभा विस्तारी ।।

दोहा— कँवर विजय गुणवान है, करे दुःखी जन सेव ।
कोई यहाँ पर दुःखी न होवे, ध्यान रखे नित मेव ।।
नियम ले दुःखी दुःख ढावे ।।१।।

विप्र एक बसे नगर मांहि, दरिद्रता रहे सदा छाई ।
भाग्य से रहा दुःख पाई, एक दिन दिल में यह आई ।।

दोहा— जाकर जंगल बीच में, तज दूं अपने प्राण ।
इस जीवन से मरना अच्छा, सोच चला नादान ।।
अरण्य में जा मरना चावे ।।२।।

देव आ बोला उस बारी, करे क्यों जीवन की ख्वारी ।
दुःख क्यों झेले नरक गरी, बात अब सुनले तू म्हारी ।।

दोहा— जान गया तुझ दुःख को, कहूँ सो कर एक काम ।
बना पूतला दरिद्र देव का, वेच नगर दरम्यान ।।
खरीदने कँवर कहाँ आवे ।।३।।

मोहरें लक्ष सवा लीजे, वाद में पूतला दे दीजे ।
द्रव्य पा जीवन रस पीजे, दान दे लाहो ले लीजे ।।

दोहा— लेकर पूतला चल दिया, बेचन नगर बाजार ।
घूम रहा है कोई न लेवे, उल्टा दे धिक्कार ।।
कँवर ले नियम निभावे ।।४।।

दीनारें विप्र त्वरित पाया, हर्षित हो लेकर घर आया ।
द्रव्य पा आनन्द दिल छाया, दान दे नित्य चित चाया ।।

दोहा— उधर कँवर ले पूतला, रक्खा निज भण्डार ।
मध्य रात में लक्ष्मी, आकर बोली यों ललकार ।।
कँवर क्यों निशंक हो सोवे ।।५।।

कँवर तन निद्रा आँख खोली, इते वहाँ रमा आय बोली ।
कँवर तुझ बुद्धि है भोली, बात नहीं हिया मांय तोली ।।

दोहा— लाकर शत्रु रख दिया, तूने मेरे पास ।
उसे वहाँ से हटा शीघ्र तू, नहीं तो तजूं आवास ।।
बोल झट तेरे दिल भावे ।।६।।

नियम को त्यागूं मैं नांही, करो जो तेरे दिल आई ।
धर्म ही दुष्कर जग मांही, प्राण प्रण से लीना ठाई ।।

दोहा— सुनकर लक्ष्मी जी चले, करी न कुछ भी देर ।
इते वहाँ पर कीर्ति आकर, लीना कँवर को घेर ।।
कहे क्यों दुःख बीज बावे ।।७।।

हुई है मति मन्द थारी, बात अब जान जरा म्हारी ।
दरिद्र को निकाल कर बाहरी, नहीं तो जाऊँ तुझ छारी ।।

दोहा— कँवर कुछ बोला नहीं, चली कीर्ति घर छोड़ ।
इसी समय वहाँ सन्मुख आया, धर्म देव भी दौड़ ।।
भाव यों अपने दरसावे ।।८।।

कँवर झट शय्या को छोड़ी, पकड़ लिया धर्म देव दौड़ी ।
करो क्यों इतनी झकझोड़ी, तेरे ही कारण सब छोड़ी ।।

दोहा— धर्म देव सुनकर कहा, सेठ सदन में जाय ।
लक्ष्मी घर-घर फिरती, वापस कँवर निकेतन आय ।।
खड़ी रह द्वार खुलवावे ।।९।।

पीछे से कीर्ति चल आई, दोनों मिल बोली कँवर ताई ।
कृपा कर द्वार खोल भाई, तुझे तज नहीं जावे कहाँ ही ।।

दोहा— धर्म बिना हम नहीं रहे, किसी स्थान के मांय ।
अतः यहाँ पर धर्म देव हैं, सुनले सच्ची वाय ।।
शपथ हम इष्ट की खावें ।।१०।।

कँवर ने द्वार खोल दीना, रमा अरु कीर्ति गुण कीना ।
अन्य है जग में तुम जीना, धर्म को राख सुयश लीना ।।

दोहा— कृपा दृष्टि कर आपने, रखी हमारी लाज ।
सारे जग में घूम गई, हम नहीं मिला कहीं साज ।।
जहाँपर हम रखना चावें ।।११।।

निवास वहाँ दोनों ने कीना, रात में चोर सेंध दीना ।
खजाना फोड़ माल लीना, हाथ में दरिद्र देव पीना ।।

दोहा— लेकर तस्कर चल दिये, आये निज आवास ।
तभी से उनके घर में, रहता दरिद्रदेव का वास ।।
अदत्ती धनी न कहलावे ।।१२।।

धर्म रख जीवन रस पीजे, कँवर सम पालन कर लीजे ।
मनुष्य भव पाय सफल कीने, व्यर्थ में मत जाने दीजे ।।

दोहा— दीक्षा धारण कर कँवर, पाया पद निर्वाण ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, धर्म करो इन्सान ।।
धर्म से भवोदधि तिर जावे ।।१३।।
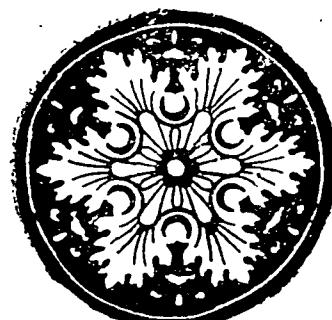
६ सत्य की महिमा

(तर्ज—लावणी अष्टपदी)

सत्यव्रत पालो नरनारी, कामना सिद्ध होय थारी ।
बनेगा जीवन सुखकारी, सत्यव्रत पालो नरनारी ।।टेर।।

नगर है राजगृह अनुपम, नहीं कोई भू पर इसके सम ।
भूपति श्रेणिक इन्द्रोपम, प्रजा पालक पाले नियम ।।
दोहा—मंत्री अभयकुमारजी, चार बुद्धि के धार ।
न्याय नीति के पूरे ज्ञाता, दुर्जन जन के साल ।।
सज्जन जन के हैं हितकारी ।। १ ।।

सेठ जिनदास नगर मांही, श्रावक व्रत पाले हर्षाई ।
भावना विमल चित्त मांही, आण जिन आज्ञा फरमाई ।।
दोहा—न्याय युक्त व्यापार से, करता जग व्यवहार ।
अनीति आय का अन्न नहीं खाना, लीना व्रत चित्तधार ।।
इक्कीस गुण श्रावक के धारी ।। २ ।।

सेठ एक बसे नगर के मांय, श्रावक जिनदास वहां पर आय ।
सेठ लख आदर दे हरषाय, बैठाया आसन ऊपर लाय ।।
दोहा—अति आग्रह से सेठ ने, की भोजन मनुहार ।
आज कृपा कर हुक्म दिलावो, है भोजन तैयार ।।
श्रावक ने करदी इन्कारी ।। ३ ।।

मेरे है नियम आय जानूँ, बाद में भोजन की मानूँ ।
नहीं मैं ज्यादा हठ तानूँ, आय कहो भोजन करवानूँ ।।
दोहा—सेठ कहे मुझ आय का, कहूँ हाल दिल खोल ।
सुनकर आप हृदय में रखना, खुले न मेरी पोल ।।
गुप्त नहीं रक्खूं इस वारी ।। ४ ।।

अह्नि में पूरा साहूकार, रात में करूँ चोर व्यापार।
सेंध देकर के लाऊँ माल, आय का सुनो मेरा यह हाल ॥

दोहा—सुनकर श्रावक ने कहा, शुद्ध नहीं तुम आय।
अतः आपका भोजन मुझको, करना नहीं सत्य वाय ॥
प्रतिज्ञा मैंने यह धारी ॥ ५ ॥

सेठ कहे कहदी मैं सत्य आय, भोजन यहां किये बिना नहीं जाय।
यदि गौरव है दिल मांय, करा दो नियम जो दिल चाय ॥

दोहा—श्रावक कहे तुम आज से, करो नियम दिल खोल।
असत्य शब्द में कभी न बोलूं, बोलो सच ही बोल ॥
सेठ कहे लिया सत्य धारी ॥ ६ ॥

श्रावक जी भोजन कर जावे, सेठ दिल अति आनंद पावे।
सेठ को घर पर पहुँचावे, रात को चोरी हित जावे ॥

दोहा—आज राज के कोष में, करूँ तस्करी काम।
निश्चय ऐसे करके निकला, लेकर सब सामान ॥
बनाकर भेष निशाचारी ॥ ७ ॥

मार्ग में निशंक हो जावे, उधर से भूप मंत्री आवे।
देखकर नरपति बतलावे, कहो यह कौन कहां जावे ॥

दोहा—सेठ कहे मैं चोर हूँ, जाऊं चोरी काज।
मगधेश कोष में चोरी करके, लाऊंगा धन आज ॥
हकीकत कह दी यह सारी ॥ ८ ॥

अभय कहे होगा कोई पागल, चोर में कहां इतना सच बल।
तजे नहीं तस्कर अपना छल, छोड़ अब गश्त दे आगे चल ॥

दोहा—श्रेणिक कहे निशंक हो, जावो भूप के कोष।
चोरी करके माल ले जावो, नहीं समझे तुम दोष ॥
सेठ दिल बढ़ी है हुशियारी ॥ ९ ॥

चोर चल निधि पास आया, सन्तरी सोते वहां पाया।
खोल कर देखे धन माया, रत्न से भरे डिब्बे पाया ॥

दोहा—दस डिब्बों में दो उठा, चला न कीनी देर।
वापिस आते मारग मांहि, मिल गये दोनों फेर ॥
पूछे फिर श्रेणिक इस वारी ॥१०॥

सेठ कहे हूँ मैं चोर महाराज, गया था यहाँ से मैं जिस काज।
भूप के कोष में जाकर आज, लाया हूँ दो डिब्बे नर राज ॥

दोहा— अभय कहे है यह वही, पागल करता शोर।
बिन मतलब हा कहता है यह, अपने आपको चोर ।।
हो गई बुद्धि मतवारी ।।११।।

सेठ सानन्द स्थान आया, सत्य पर श्रद्धा अटल लाया ।
धन्य जिनदास श्रावक पाया, भाग्य अब मेरा सुलटाया ।।

दोहा—श्रावक के गुण चित्त से, करके अति हर्षाय।
सोते सेठ को निद्रा आगई, सूर्योदय प्रकटाय ।।
सत्य से नशे विपत्ति सारी ।।१२।।

प्रातः जब भंडारी आया, खजाना खुला वहां पाया।
देखकर भय मन में लाया, रत्न के डिब्बों पास आया ।।

दोहा—दो डिब्बे नहीं रत्न के, मन में करे विचार।
उठा आठ घर पर पहुँचाऊँ, पीछे करूँ पुकार ।।
छिपी रहे चोरी सब म्हारी ।।१३।।

काम कर सभा मांहि आया, हाल सब नृप को दरसाया ।
डिब्बे नहीं रत्नों के पाया, चोर ले सब डिब्बे धाया ।।

दोहा—सुनकर सोचे भूपति, तस्कर आया रात।
दो डिब्बे ले गया चुरा कर, कहता था सच बात ।।
कहे यह दस की इसवारी ।।१४।।

भूप ने मंत्री बुलवाया, हुक्म यों तत्क्षण फरमाया।
चोर को अभय पकड़ लाया, भूधर के सन्मुख बैठाया ।।

दोहा—भूप कहे क्या ले गया, चोरी करके माल।
सत्य-२ सब बतला वरना, होगा बुरा हवाल ।।
चोर कहे सत्य कहूँ सारी ।।१५।।

रात में चोरी को आया, रत्न के दस डिब्बे पाया।
उठा दो डिब्बे ले आया, सत्य वृत्तान्त दरसाया ।।

दोहा—भूपति भंडारी बुला, कहो कहाँ है माल।
नहीं तो सूली पर लटका कर, करस्यूँ बुरा हवाल ।।
त्रसित हो बोला भंडारी ।।१६।।

डिब्बे सब घर से मंगवाये, भूप के सन्मुख धरवाये।
देख कर नरपति फरमावे, ख्याल नहीं इज्जत का लावे ।।

दोहा—आजीवन तक कैद में, धर दो हुक्म लगाय।
चोर सेठ को बुला सामने, कुंकुम तिलक चढ़ाय ।।
सजाकर गज की असवारी ।।१७।।

बनाकर भूपति भंडारी, नगर में ख्याति करी जहारी।
सत्य की महिमा विस्तारी, लोक में पैठ बनी भारी॥

दोहा—घूमा करके नगर में, पहुँचाया निज स्थान।
नगर निवासी मुख से बोले, सत्य रखो इन्सान॥
सत्य से होवे जयकारी॥१८॥

सेठ चल श्रावक घर आया, श्रावक के गुण मुख से गाया।
संगत कर चित्त से हरसाया, सत्य व्रत लेकर सुख पाया॥

दोहा—एक वचन को ग्रहण कर, कीना जन्म सुधार।
अब श्रावक व्रत मन से लेकर, पालूं निर अतिचार॥
बना श्रावक शुद्धाचारी॥१९॥

चोर भी श्रावक संग पाकर, सुधर गया सच का व्रत लेकर।
नियम ले पालो नित चित धर, मिला मानव जीवन सुखकर॥

दोहा—सम्वत् पन्द्रह जेठ में, जालिया ग्राम मंझार।
'प्राज्ञ' कृपा से 'सोहन' मुनि, ने कीना संबंध तैयार॥
सत्य है जीवन हितकारी॥२०॥

१०
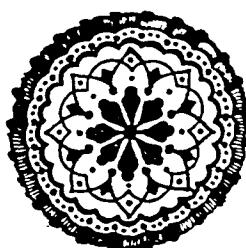
तीन मित्र : कौन खोटा, कौन खरा ?

(तर्ज:—लावणी खड़ी)

सखा वना तू जुहार मित्र को, और मित्र नहीं देंगे काम ।
समय पड़े पर बदल जायेंगे, पहले सोच इसका अन्जाम ।।टेर।।

पुढवीपुर नगरी का भूपति, शूरसेन है चतुर सुजान ।
कंवर रूपसेन वीर धीर अरु, कला बहत्तर का है जाण ।।

तीन मित्र कर लिए कंवर ने, नित्य मित्र रहे प्राण समान ।
पर्व मित्र पर्व पर मिलता, जुहार मित्र रास्ते का मान ।।

शेर:— एक दिन राजा कहे, क्यों व्यर्थ धन को खो रहा ।
करले परीक्षा मित्र जन की, कौन सच्चा है यहां ।।

करने परीक्षा मित्र निकला, नित्य के घर आ रहा ।
आवाज दे कहे कपाट खोलो, मैं अति घबरा रहा ।।

अति विलम्व से नीचे उतरा, रुक्ष शव्द कहे क्या है काम ।। १ ।।

करुण कहानी सुनो मित्र तुम, दाता मुझ पर रुष्ट हुए ।
शरण तिहारी आया हूँ मैं, ले करके विश्वास हिये ।।

सुनकर नित्य मित्र यों वोला, नहीं स्थान दूं मैं इस वार ।
राजा का अपराधी रखकर, क्यों झेलूं मैं कष्ट अपार ।।

शेर:— चल यहां से दूर हट जा, वरना लाऊं सन्तरी ।
गिरफ्त में तुझको कराऊं, वात यह कह दी खरी ।।

हो रवाना पर्व के घर, आय यों अर्जी करी ।
दाता मुझे देते हैं फांसी, तू वचा विपत्ति परी ।।

दे सत्कार मित्र यों वोला, चाहे जितने ले लो दाम ।। २ ।।

गया तीसरे वयस्क घर पे, देख सद्य दीना सत्कार ।
बैठाकर ऊंचे आसन पर, कीनी खूब ही सार संभार ।।
कृपा करी सेवा फरमावो, करूं कार्य मैं वह तत्काल ।
हृदय व्यथा सत्वर दरसावो, कैसे आपका बदन मलाल ।।

शेरः— सुन मित्र मेरी बात, सब दिल खोलकर तुझको कहूं ।
दाता मुझे फांसी चढ़ाते, छिप कर कहो मैं कहां रहूं ।।
आसरा है एक तेरा, शरण मैं तेरी चहूँ ।
विश्वास कर मैं आ गया हूँ, डूबते शरणा गहूँ ।।

अभी बचाऊं तुझे कष्ट से, करो खूब यहां पर आराम ।। ३ ।।

मध्य रात में चला उठ कर, आया है पंचों के पास ।
बिन अपराध रुष्ट हो राजा, करे कंवर का देह विनाश ।।
सुनकर कहते सभी पंच, अन्यायी भूप को दें अवकाश ।
देकर कंवर को राज्य हमारा, ईश बनावें सद्गुण रास ।।

शेरः— सुन बात पंचों की वहां से, सेनापति के घर गया ।
पक्ष में उसको बना फिर, मंत्री दर पे आ गया ।।
बात कह कर भूप अवगुण, साफ सब दरसा दिया ।
मन्त्री हो गया पक्ष में, झट महल मांही चल दिया ।।

कह के सब वृत्तान्त राणी को, बना लिया है पक्ष तमाम ।। ४ ।।

सूर्योदय नर समूह मिलकर, राजा का अपवाद कहें ।
इस जालिम नरपति के हम, अन्याय सर्वथा नहीं सहें ।।
अन्यायी को शीघ्र पकड़ लो, कैद करो हम यही चहें ।
कंवर को दो राज गादी, आनन्द से हम यहां रहें ।।

शेरः— देखकर यह कार्य मन में, भूपति चकरा गया ।
जानूं नहीं अपराध मेरा, किस तरह से हो गया ।।
मन्त्री अरु रानी सभी, सेना सहित इस पक्ष में ।
बदल गया है भाग्य मेरा, हो गये विपक्ष में ।।

पड़ा भूप चिन्ता में गहरा, छूट जावेगा अब धन धाम ।। ५ ।।

उसी समय आ कंवर चरण में, सत्वर शीश झुकाया है ।
जुहार मित्र की करी प्रशंसा, सभी हाल दरसाया है ।।

सुनकर सब वृत्तान्त वहाँ से, जन गए स्थान सिधाया है ।
इस हेतु से समझो सज्जनो, सच्चा मित्र बतलाया है ।।

शेरः— देह समझो नित्य मित्र, व पर्व परिजन मानिये ।
जुहार मित्र सम मित्र सच्चा, धर्म को पहचानिये ।।

छोड़ मिथ्या मित्र को, सच्चा सखा अपनाइये ।
सुबोध पाकर मनुष्य भव को, व्यर्थ अब मत खोइये ।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, करले धर्म सारे सब काम ।। ६ ।।
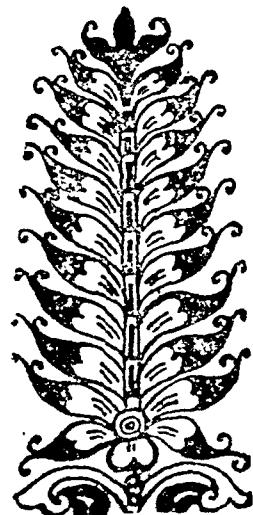
११ श्रद्धा सुमेरु : अरणक

दोहाः— वर्द्धमान फरमान यह, रत्नत्रय लो धार ।
जन्म-मरण के चक्र से, हो जावे उद्धार ।।

(तर्ज—द्रोण)

जिन वचनों पर श्रद्धा रक्खो गहरी, महा. शिथिल नहीं होने पावे जी ।
श्रद्धा से मत डिगो यदि, आ इन्द्र डिगावे जी ।।टेर।।

एक समय सुधर्मा सभा बीच में बैठा, महा. शचीपति यों फरमावे जी ।
समकित में दृढ़ अरणक सम, नहीं नजर में आवेजी ।
श्रद्धावन्त प्रिय धर्मी ऐसा होवे, महा. धर्म रग रग में छावे जी ।
कभी न डिगता धर्म कार्य से, कोई डिगावे जी ।
सभी सभासद् अमर प्रशंसा करते, महा. एक सुर मन नहीं भावे जी ।। १ ।।

करूं परीक्षा अवधि ज्ञान से देखा, महा. यह अवसर है सुखदाई जी ।
अभी है अरणक सरितापति में, पोत के माँही जी ।
वैक्रिय शक्ति से त्वरित वहां चल आया, महा. भयंकर रूप बनाया जी ।
वायु वेग से एक साथ सब, जहाज हिलाया जी ।
देव कहे अब सुनलो अरणक मेरी, महा. धर्म अनमोल कहावे जी ।। २ ।।

पर सुनो तुझे यह निश्चय करना होगा, महा. धर्म को दीना छोड़ी जी ।
यदि नहीं कहा यह शब्द, जहाज को दूंगा तोड़ी जी ।
कर आर्तध्यान मर दुर्गति मांहि जावे, महा. बोले यदि प्राण तू चावे जी ।
सुन श्रावक सोचे नहीं कहूँ, चाहे सब कुछ जावे जी ।
उपसर्ग करे मिथ्याती देव यहां आकर, महा. सागरी अनशन ठावे जी ।। ३ ।।

बोल बोल यों त्रिदश शब्द उच्चारे, महा. ध्यान दृढ़ श्रावक कीना जी ।
नवपद का ले शरण, ज्ञान से आतम चीना जी ।
क्या शक्ति देव की इन्द्र चाहे खुद आवे, महा. आत्मा है अविनाशी जी ।
मरे नहीं यह कभी, मरे जो होय विनाशी जी ।
नहीं बोला श्रावक तब जहाज उठाया ऊपर, महा. सात अट्ठ ताल लेजावेजी ।। ४ ।।

त्रास त्रसित हो अन्य श्रावक यों बोले, महा. हमारी रक्षा कीजे जी ।
हमने छोड़ा धर्म, आप चौड़े सुन लीजे जी ।
देव कहे मैं तुमसे कब छुड़वाता, महा. व्यर्थ क्यों शब्द निकालो जी ।
तुम छोड़े हुए हो धर्म ढोंग रच, धर्म को पालो जी ।
एक वक्त जो अरणक मुख से कहदे, महा. प्राण सबके बच जावे जी ।। ५

सभी श्रावकगण अरणकजी से कहते, महा. संग में क्यों ले आये जी ।
कहदो क्यों नहीं एक बार, हम सब बच जायें जी ।
कहने से क्या धर्म टूट जाता है, महा. श्रावक नहीं किसी की सुनता जी ।
तब कहे हमें यह मरवाने का, ढोंग रचाता जी ।
जब अमर लगाकर ज्ञान श्रावक को देखे, महा. ध्यान निर्भय स्थिर ठावे जी ।। ६

एक रोम राय भी चलित नहीं है भय से, महा. देव तब जहाज उतारे जी ।
शनैः शनैः ला पोत रखा, हुए निर्भय सारे जी ।
अब अमर घूंघरा धमका अरणकजी के, महा. चरण में शीश नमावे जी ।
अपराध करो मुझ माफ, आप गुण कहा न जावे जी ।
इन्द्र प्रशंसा करी सभा के माही, महा. आप सब ही दरसावे जी ।। ७

मैं मिथ्या मति से जान सका नहीं तुझको, महा. परीक्षा करने आया जी ।
अब मिथ्या दृष्टि तज, समकित के रंग रंगाया जी ।
कुण्डल की दो जोड़ी अर्पित करके, महा. नमन कर स्वर्ग सिधाया जी ।
देख वहां का दृश्य सभी जन, विस्मय पाया जी ।
उपसर्ग विलय लख श्रावक अनशन पाले, महा. ध्यान से मुक्त हो जावे जी ।। ८

देव गुरु सद्धर्म हृदय में धारी, महा. प्राण प्रण से जो निभावे जी ।
निश्चय बेड़ा पार जगत से, वे नर पावे जी ।
कथा सुनी अरणक की दिल में धारो, महा. कभी मन को न डुलावो जी ।
रख समकित मजबूत, मनुष्य भव सफल बनावो जी ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि सावर में, महा. श्रावक की महिमा गावे जी ।। ९

१२ कृतघ्नता का फल
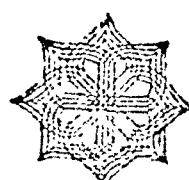
(तर्ज — लावणी)

किया हुआ उपकार भूलकर, उलटा कर्म कमावेगा ।
निश्चय ही अपकारी अपना, खुद ही नाश करावेगा ।।टेर।।

वीसलपुर में भूप अवनिपति, प्रजापालक स्वामी था ।
शत्रु निकन्दन सज्जन नन्दन, अरिमद शालक नामी था ।।
सेठ एक श्रीपाल दयालु, दया धर्म का धारक था ।
नार अनुपम पतिव्रता गुण, गुणावली का पालक था ।।

दोहा :— एक समय गई गुणावली, पीहर मिलने काज ।
मात-पिता से प्रेम युक्त, मिल पाया सुख साज ।।
श्रीपाल से कहें सभी जन, कब ससुराल सिधावेगा ।।१।।

श्रीपाल कहे जाऊं आज मैं, श्वसुर ग्राम में लेने काज ।
कह कर वहां से चला राह में, देखा उसने पन्नग राज ।।
मुर्दागत था शीतकोप से, उठा लिया है देने साज ।
कम्बल में उसको रख दीना, मूर्छा उसकी गई है भाज ।।

दोहा :— सावधान हो सर्प यों, बोला है तत्काल ।
डसकर तेरे गात्र को, करूं हवाले काल ।।
सुनकर सेठ कहे तू ऐसा, जुल्म मेरे पर ढावेगा ।।२।।

मैंने क्या अपराध किया है, सोच जरा मन के मांही ।
कपड़ा डाल तेरे पर मैंने, दिया ठण्ड से बचवाई ।।
उल्टा मुझको खाना चाहता, ऐसी क्यों मन में आई ।
सोच समझ कर कहो शब्द, मत करो भूल कर अन्याई ।।

दोहा :— बस बस यह उपदेश अब, बहुत सुन लिए कान ।
सब प्रपंच को छोड़ कर, मेरी अब लो मान ।।
नहीं चलने की कुछ भी तेरी, कितनी बात बनावेगा ।।३।।

सेठ कहे मैं जाऊं सासरे, वापिस आते खा जाना।
यह मैं देता वचन आपको, लौट यहां ही है आना ॥
सर्पराज कहे ऐसा है तब, जाकर जल्दी आ जाना।
मैं बैठा यहां करूं प्रतीक्षा, संग नार को ले आना ॥

दोहा :—आये जंवाई सासरे, हर्षे सब नर नार ।
किन्तु सेठ श्रीपाल के, चित में बड़ा विचार ॥

अल्प दिनों का मेरा जीवन, फिर तो काल खा जावेगा ॥४॥

देख उदासी पूछे सब जन, पता किसी को नहीं दीना।
लेकर आया नार संग में, रस्ता वापिस वही लीना ॥
मिला वहीं पर फणिधर बैठा, देख सेठ बोला तत्काल।
वचन बद्ध मैं आया हूँ सुन, सर्प तत्क्षण आया चाल ॥

दोहा :—आते देखा सर्प को, बोली यों वर नार ।
नाग देव मुझ प्रार्थना, कर लीजे स्वीकार ॥

छोड़ दीजिये प्राणनाथ को, इन बिन कौन निभावेगा ॥५॥

मेरे सहारा एक यही है, पति बिन जीवन है निस्सार।
क्यों डसते हो अपराध कहो, तब कहा सर्प ने सब ही सार ॥
बोली पत्नी भला किया इन, तुम पर कीना है उपकार।
सर्प कहे खाऊंगा तब भी, नार कहे मुझ क्या आधार ॥

दोहा :—सर्प कहे चिन्ता तजो, देऊं वस्तु सार ।
शचिपति भी नहीं कर सके, तेरा कभी बिगाड़ ॥

जड़ी सामने लाकर रक्खी, गुण इसका समझावेगा ॥६॥

नाग कहे अपने बचाव हित, सन्मुख वाले पर डाले।
भस्म होय सुन नार त्वरित ले, डाली सर्प पर तत्काले ॥
पहुंच गया यम द्वार नाग निज, करणी का फल वह पाले।
अपकारो की दुर्गति होती, सुनकर भवि मग शुभ चाले ॥

दोहा :—'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, कहे सदा हितकार।
सज्जन ही रखते हिये, किया हुआ उपकार ॥

सुन कर कथा तजे कृतघ्नता, जीवन सफल बनावेगा ॥७॥

□ □ □

१३ नियम-पालन

(तर्ज—गवरल इसरजी)

श्रोता सुनियो ध्यान लगाय, चरित्र सुहामना जी ।
कीज्यो नियम शुद्ध चित चाव, फले मन भावना जी ।।टेर।।

नगरी सावत्थी शुभ स्थान, जहां पर बसे सेठ गुणवान ।
उसमें जिनदत्तजी अगवान, सब विधि लायक पुर के मांय
ललित लुभावना जी ।।१।।

सेठाणी जिन सेवा जान, दया दान में है प्रधान ।
नव तत्त्वों की जिसे पिछाण, पाले गृह कार्य की रीति
भीति सब टारना जी ।।२।।

सेठ के चले दिशावर काम, हो रहा सत पीढ़ी से नाम ।
लक्ष्मी रही अचल कर ठाम, बढ़ता रहे सदा ही जिनका
यश जग छावना जी ।।३।।

एक दिन सेठाणी मन मांय, काम सब सेठ का रहे सवाय ।
कमी न आवे कभी घर माय, बैठी सोच रही एकान्त
सेठ घर आवना जी ।।४।।

दोहा :—विचार समुद्र में डूबती, लखपति आया पास ।
कहो प्रिये किस बात की, तुमको चिन्ता खास ।।१।।

(तर्ज—पणिहारी)

अर्ज करूं कर जोड़ ने सुणो प्रीतमजी, मुझ हृदय की वात वालमजी ।
आप प्रतापे कमी नहीं सुणो प्रीतमजी, पर चाहूँ एक वात वालमजी ।।१।।

दोहा :—सेठ कहे प्यारी सुनो, कहो स्पष्ट अवदात ।
खाली मुट्ठी सदन में, नहीं पधारे नाथ ।।२।।

सुणी सेठ यह वार्ता, हंसकर बोला एम ।
इस छोटी सी बात का, क्या करना है नेम ॥३॥

सेठ नियम पाले सदा, चाले कुल की चाल ।
इण अवसर घटना घटे, सुनियो सारा हाल ॥४॥

चन्द्रायण—एक दिवस दो मित्र मिली बातां करें ।
कौर रह्यो इण शहर सात पीढ़ी सिरे ।
जिनदत्त नामा सेठ नहीं निर्धन हुवो ।
और हुए सब सेठ दीवालिये तुम सुवो ॥१॥

चाल पूर्व—सेठ मिलकर करे विचार, हम सब बिगड़ गये कई वार ।
बढ़ता जिनदत्त के व्यापार, कर दे इनको अपन समान
चाल चल वंचना रे ॥५॥

सेठ सब लीनी हुन्डिये दवाय, चलकर जिनदत्तजी पे आय ।
बोले दीज्यो हुन्डी सिकराय, नहीं तो करे दिवाला जाहिर
साफ सुहावना जी ॥६॥

दोहा :—कहे सेठजी लीजिये, हुन्डी के सब दाम ।
वीस लक्ष की हुन्डिये, सिखरा रखिये नाम ॥५॥
वीस लाख हुन्डी तणी, रकम नहीं है पास ।
संखिया ले बाजार से, पहुँचे निज आवास ॥६॥

चन्द्रायण—भोजन समय नहीं सेठ, सदन पर आविया ।
रही सेठाणी अकुलाय, नहीं पति देखिया ।
आ गये इतने सेठ, चित्त चिन्ता भरी ।
पहले पूछूं बात, चिन्ता है क्या खरी ॥२॥

(राग मांड)

हो मुझ प्रीतम प्यारा, प्राण आधारा मोहनगारा हो राज ॥टेर॥
देख उदासी आपकी रे, करती मम दिल नाश ।
नाथ ! बात फरमाइये रे, होवे जो मन खास ॥१॥

सेठ कहे प्यारी सुनो ए, मरण समय है आज ।
पूर्व संचित सारी इज्जत, बिगड़े प्यारी आज ॥
हो सुन प्यारी म्हारी मोहनगारी, सारी दिल की बात ॥२॥

दोहा :—सेठाणी कर जोड़ के, बोली मधुरी वाण ।
इस छोटी सी बात में, क्यों तजते हो प्राण ॥७॥

(तर्ज—राधेश्याम)

जितनी सम्पत्ति चाहे नाथ !, वह मुझसे आप ग्रहण कीजे ।
कमी नहीं है कुछ भी यहां पर, नाथ शंका सब तज दीजे ।।१।।

सेठ कहे विश्वास दिला, मुझको तू जिन्दा रखती है ।
पर शांति नहीं होगी बातों से, जरा देख यह सकती है ।।२।।

चन्द्रायण—लेकर निज भर्तार, आ गई गज चाल से ।
खोल दिये भण्डार, भरे थे माल से ।
धन राशि लख सेठ, मुक्त हुवो काल से ।
चुका सभी के दाम, छुटा जंजाल से ।।३।।

रही सेठ की बात, नियम शुद्ध पालियो ।
संग्रह करलो धर्म, सभी नर नारियो ।
पालो निश्चय भाव, व्रत जो धारियो ।
'प्राज्ञ' कृपा से, 'सोहन' मुनि यों सुना रह्यो ।।४।।

१४ पाप का बाप : लोभ
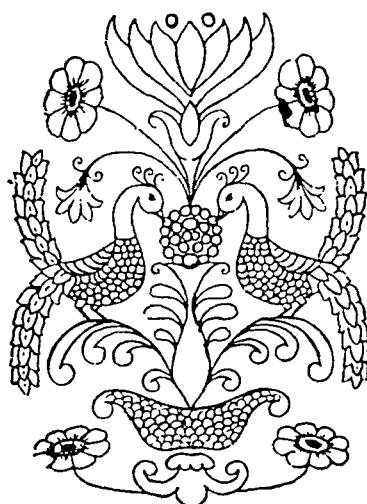
(तर्ज:—द्रोण)

यह लोभ पाप का बाप मुनि फरमावे, महा. तात माता अरु भ्राता जी।
लालच तुड़वा दे प्रेम, गिने नहीं कुछ भी नाता जी ।।टेर।।

एक श्रीपुर नामा नगर अति रमणीक है, महा. भूप भूधव गुणधारी जी।
करे न्याय नीति से राज्य, प्रजा को है सुखकारी जी।
दो मित्र वाम और रूपसेन वहाँ रहते, महा. प्रेम था जिनमें भारी जी।
मानों शरीर दो जीव एक, कहते नरनारी जी।
एक दिन ने दोनों मिलकर सलाह जमाई, महा. है दोनों सब विध ज्ञाता जी ।।१।।

चले दिसावर करे कमाई दोनों, महा. पूछ कर निज पितु माता जी।
मेटे सब ही कष्ट दरिद्रपन का, हम भ्राता जी।
लेकर आज्ञा चले विदेश कमाने, महा. भाग्य से मिले सहाई जी।
रह गये नौकरी काज, करे दोनों हर्षाई जी।
रूपसेन को करी तरक्की शाह ने, महा. वाम बेकार ही फिरता जी ।।२।।

रूप वाम को सदा सहायता देता, महा. प्राण से प्यारा जाने जी।
बड़ा समझ कर वामदेव को, पितु सम माने जी।
चार वर्ष के बाद रूप के पासे, महा. सम्पत्ति अच्छी हो गई जी।
त्रण लाख रुपे की जोड़, सभी धन माल की आई जी।
अब चलें देश में रूप सेन यों सोचे, महा. याद आते पितु माता जी ।।३।।

दोहा :—पूछा वाम को रूप ने, चले निज आवास।
वाम कहे मैं नहीं चलूं, पैसा नहीं मुझ पास ।।१।।

तब रूपसेन ने कहा चलो तुम भाई, महा. पूंजी का चौथा हिस्सा जी।
दे दूंगा तुमको, वामदेव के जंच गया किस्सा जी।
सब सम्पत्ति लेकर चले वहां से दोनों, महा. मार्ग में नीति बिगड़ी जी।
अब रूपसेन को मार, लेऊं पूंजी मैं सगली जी।
यों सोच वाम मध्य रात छाती चढ़ बैठा, महा. कर में करवाल घुमाता जी ।।४।।

जब आँख खोल कर रूपसेन ने देखा, महा. वाम से बोले वानी जी।
क्या करता मित्र इस समय, खड्ग लेकर नादानी जी।
तब वाम कहे मैं तुझे यहाँ पर मारूं, महा. यही मैंने दिल ठानी जी।
अति समझाया रूपसेन, पर एक न मानी जी।
रूपसेन मेरे मात पिता के आगे, महा. कहूँ सो कहना भ्राता जी ॥५॥

दोहा :—वा रु घो ल ये चार ही, अक्षर कहिजे तात।
नमस्कार इण साथ में, भूल न जाजे भ्रात ॥२॥

सुनकर के तत्काल असी घुमाई, महा. मित्र का शीश उड़ाया जी।
क्या होगा भावी हाल, लोभी मन सोच न पाया जी।
मार मित्र को तुरन्त चला गाड़ी पे, महा. हृदय में हर्ष अपारी जी।
मिट गया वाम अब हुई ऋद्धि यह सब ही म्हारी जी।
अक्सर देखी गाड़िये वापस फेरी, महा. अन्य ला शकट भराता जी ॥६॥

अब दीनी सूचना मात पिता के पासे, महा. वाम धन लेकर आया जी।
सुन मात पिता, ले सगे सम्बन्धी सन्मुख आया जी।
खूब बढ़ा कर लाये शहर के भीतर, महा. बात यह हो गई जहारी जी।
विप्र पुत्र संग, कमा के लाया ऋद्धि अपारी जी।
सुन सेठ चला है समाचार लेने को, महा. वाम के घर पर आता जी ॥७॥

सेठ देख झूठ वाम नमन कर बोला, महा. हुक्म हो सो फरमावे जी।
अपना समझो पुत्र, और नहीं दिल में लावे जी।
तब सेठ कहे क्यों रूपसेन नहीं आया, महा. कहूँ क्या हाल मैं उसका जी।
किये अनेक उपाय, किन्तु नहीं काम है वश का जी।
पैसा पास नहीं एक भी उसके आया, महा. कर्म से ही दुःख पाता जी ॥८॥

सेठ कहे कहो समाचार क्या भेजे, महा. वाम कहे यह सत्य दरसाया जी।
वा रु घो ल के सिवा, नहीं संदेश सुनाया जी।
सुन सेठ हृदय में एकदम शंका आई, महा. मत्त हो फिरे घूमता जी।
वा रु घो ल का अर्थ कहो, मुख से उच्चरता जी।
यों कहता-कहता राज्य सभा में आया, महा. इसी का अर्थ कराता जी ॥९॥

नहीं आया अर्थ तब भूपति झट यों बोला, महा. पंडितो सुन लो मेरी जी।
बता देवो तत्काल, भाव नहीं होवे देरी जी।
यदि नहीं बताया अर्थ आज तुम इसका, महा. जप्त सब हो जागीरी जी।
कठोर शब्द सुन भूप, सभी में चिन्ता भारी जी।
उस समय एक पंडित झट उठ कर बोला, महा. अर्थ मैं ठीक बताता जी ॥१०॥

श्लोक :— वामदेवेन मित्रेण, रूपसेन वनान्तरे।
घोर निद्रा प्रसंगेन, लक्ष लोभान्नि पातितः ॥

उत्तर सुन कर भूप अति कोपाया, महा. त्वरित ही वाम बुलाया जी।
कह दो सच्चा हाल, द्रव्य यह कहाँ से लाया जी।
यदि सत्य नहीं कह झूठी बात बनाई, महा. समझ लो मृत्यु आई जी।
मारे भय के वामदेव ने, सच दरसाई जी।
यह सभी अर्थ मैं रूपसेन का लाया, महा. लोभ अकृत्य कराता जी ।।११।।

बुला सेठ को भूप तसल्ली दीनी, महा. द्रव्य वापिस दिलवाया जी।
जाहिर करके बात, वाम को कैद कराया जी।
देख व्यवस्था सोचे सेठ यों दिल में, महा. नहीं हो धन से सुधारा जी।
तज सम्पत्ति लीना संयम, जग से किया किनारा जी।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि यों कहता, महा. लोभ तज पावे साता जी ।।१२।।
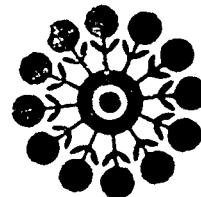
१५ | स्वार्थ भरा संसार

(तर्ज—द्रोण)

सद्गुरु दे उपदेश ध्यान में लावो, महा. जगत् स्वार्थ का मारा जी ।
नहीं आवे कोई काम, समझ झूठा परिवारा जी ।।टेर।।

एक रत्नपुरी में सुन्दर शाह धनधारी, महा. नार गुणवन्ती प्यारी जी ।
चार पुत्र की जोड़ रूप यौवन में भारी जी ।
चारों का विवाह कर सेठ अति सुख पाया, महा. आनन्द में दिवस बिताता जी ।
कुछ समय बाद आ गई जरा, तन रंग पलराता जी ।
नारी मर गई धन पुत्र हाथ में जावे, महा. सेठ अब लागे खारा जी ।।१।।

दो चार सांस ले सेठ हाट पर आता, महा. तनुज लखकर शरमावे जी ।
बैठ यहां पर जगह बिगाड़े नाहक आवे जी ।
रहो हवेली क्यों आ गोते खावो, महा. सेठ कहे दिल घबरावे जी ।
अतः यहां पर देख सभी जन, मन लग जावे ली ।
समझा सेठ को रखा हवेली मांही, महा. नारियां कहे क्या धारा जी ।।२।।

पतियों से बोली सेठ पोल में रहता, महा. इसे हम अति दुःख पावे जी ।
इसलिए यहां से खाट हटा दो, यह हम चावे जी ।
पुत्रों ने पिता को रखा भैंस के खूंटे, महा. सेठ से बोले बानी जी ।
यहां आ जावेगा बारी बार, नित भात रु पानी जी ।
पड़ा सेठ परवश में दिल दुःख पावे, महा. आया निज मित्र पियारा जी ।।३।।

देख सेठ का चरित्र मित्र यों बोला, महा. कहो क्या हाल है भ्राता जी ।
सेठ कहा निज हाल सुनी, दिल में दुःख पाता जी ।
कहे सेठ से मित्र मती घबराओ, महा. करूं मैं उपचार ऐसा जी ।
मिले खूब आनन्द भोग, सुख होवे वैसा जी ।
एक दिवस मित्र ले पेटी सेठ दर आया, महा. बुलाये पुत्र रु दारा जी ।।४।।

सबके सन्मुख मित्र सेठ को बोला, महा. सम्भालो यह धन तेरा जी।
अब घटने खूटने का दोष नहीं है, कुछ भी मेरा जी।
कहा सेठ ने रख दो यहां पर भाई, महा. देखली पूंजी सारी जी।
नहीं रही तुम्हारे पास, एक भी कौड़ी म्हारी जी।
पेटी भूमि में रखकर खाट बिछाया, महा. रहो सब मुझसे न्यारा जी ॥५॥

पूंजी पास में देख सभी चल आये, महा. करी नरमाई बोले जी।
हम सभी आप संतान, चूक बाहर नहीं खोले जी।
पुत्र कुपुत्र हो जाय मायत नहीं बदले, महा. चाकरी करस्यां पूरी जी।
यों कही सेठ को स्नान करा, मल दिया उतारी जी।
अब लेजा महल में पंखा ढोल जिमावे, महा. हाजिर नित दूध कटोरा जी ॥६॥

दोनों वक्त आ पग चंपी सब करते, महा. माल नित खूब उड़ावे जी।
आखिर कीना काल, सेठ यमलोक सिधावे जी।
अब बुला मित्र पेटी को बाहर निकाली, महा. देखकर अति पछतावे जी।
तब बोला मित्र निज करनी का, फल ये ही पावे जी।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि यों कहता, महा. त्याग जग जान असारा जी ॥७॥

१६ मानव देह : चिन्तामणि
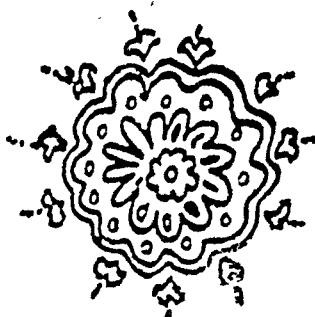
(तर्ज—अष्टपदी लावणी)

चौरासी लक्ष योनि सारी, उत्तम कही देवों से प्यारी ।
सूत्र में मानव तन धारी, मिली देह महा कीमत वारी ।।टेर।।

देह तू चिन्तामणि पाया, आलस में मत खोवे भाया ।
मिले नहीं ज्ञानी फरमाया, मानव तन रत्न हाथ आया ।
दोहा— कथा कहूँ इस ऊपरे, सुनियों ध्यान लगाय ।
चिन्तामणि पा खो दिया सरे, ब्राह्मण अति पछताय ।।
सुनाऊँ करके विस्तारी ।।१।।

नगर एक भू भूषण ख्याता, बसे तहां ब्राह्मण एक ज्ञाता ।
अर्थ बिन दुःख में दिन जाता, मांग कर जीवन बीताता ।
दोहा— एक दिवस नारी कहे, नहिं घर में कुछ दाम ।
पुत्र प्रसव का दिन यदि, आवे कैसे होगा काम ।।
नाथ मुझ चिन्ता यह भारी ।।२।।

एक दिन समुद्र तट आवे, याचना कर पैसे पावे ।
छः आने लेकर घर आवे, नारी को देकर हर्षावे ।
दोहा— कुछ समय पश्चात् ही, फिर मांगन को जाय ।
अब मैं पोत पर चढ़कर मांगू, पैसे मिले सवाय ।।
जहाज पर चढ़ा हृदयधारी ।।३।।

तत्क्षण पोत चला जल मांय, देखकर विप्र अति घबराय ।
शोर कर मुख से बोला वाय, उतारो मुझको यही मन चाय ।
दोहा— कप्तान कहे अब नहीं रुके, जायेगा अति दूर ।
नहीं उतरने का साधन है, कितना जल भरपूर ।।
खा जावे तुझको जलचारी ।।४।।

पोत चल समुद्र तट आवे, पंचशत कोस दूर जावे ।
मनुष्यगण नीचे उतरावे, सामान ले निज घर को जावे ।
दोहा— ब्राह्मण भिक्षावृत्ति से, रोज चलावे काम ।
मन में ऐसे सोचे निश दिन, कब जाऊँ मुझ ग्राम ।।
याद में आवे घर नारी ।।५।।

एक दिन समुद्र तट आवे, पोत भू भूषण एक जावे ।
बात सुन मन में हर्षावे, जाऊँ निज ग्राम हृदय चावे ।
दोहा— उसी समय वहाँ विप्र को, मिला पदारथ सार ।
चिन्तामणि पा करके सोचे, धारूं सो तय्यार ।।
कामना सफल हुई म्हारी ।।६।।

जहाज पर चढ़ा हर्ष करके, चिन्तामणि रखूं छिपा करके ।
पास नहीं बैठ किसी नर के, छीन ले हाथ पकड़ करके ।
दोहा— चिन्तामणि कर में लिया, रखा पयोधि मांय ।
ठंडी लहर से निद्रा आई, छूट समुद्र में जाय ।।
नष्ट हुई आशायें सारी ।।७।।

दृष्टान्त से समझ अरे प्यारे, चिन्तामणि देह मती हारे ।
ज्ञानी गुरु आकर पुकारे, सफल हो हिए मांही धारे ।
दोहा— मोह ममता का त्याग कर, ले संवर को साथ ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, बना रहेगा नाथ ।।
बात सुन धारो नर नारी ।।८।।

□ □ □

१७ बुद्धिर्यस्य, बलं तस्य

(तर्ज—लावणी खड़ी)

तन बल धन बल पाकर मन में, क्यों इतने इतराते हैं।
बुद्धि आगे सब ही व्यर्थ यह, ज्ञानी जन फरमाते हैं ।। टेर ।।

कोंकण देश का भूप अजितसेन, गया एक दिन जंगल माय।
बुद्धिसेन है मंत्री संग में, अश्व रहे दोनों दौड़ाय।
पड़ा दूर से स्वर कानों में, मन्जुल लहरी आनन्द दाय।
भूप कहे मन्त्री से देखो, कौन यहां पर गायन गाय।

आज्ञा पा मन्त्री गया, देखा अनुपम रूप जी।
एक बाला वृक्ष के नीचे, बैठी शीतल छाय जी।
गा रही है मस्त होकर, स्वर लहरी लहराय जी।
पुरुष को वह आते देख, उठ कुटिया में जाय जी।
स्वर सुरीला निकल रहा है, सुनकर मृग वहाँ आते हैं ।।१।।

मन्त्री सोचे बिन आज्ञा के, अन्दर जाना उपयुक्त नहीं।
करलूं बातें जो करनी हैं, कुटिया द्वार पर खड़ा रही।
अन्दर कहो तुम क्या करती हो, तब बाला ने बात कही।
एक मसल कर करूं परीक्षा, अनेक की मैं सही-सही।

सुन बात विस्मित हो गया, यह कौन कैसी नार जी।
अन्य भी हैं या अकेली, पूछ लूं तत्काल जी।
तुम अकेली यहां रहो, या अन्य भी परिवार जी।
बाला कहे माता-पिता हैं, बन्धु भाभी लार जी।
सभी कुटुम्ब सानन्द रहे, यहाँ कभी नहीं भय खाते हैं ।।२।।

माता गई है कहां तुम्हारी, कह दो बाले शंका टाल।
बाला कहती पीहर गई है, कब आवेगी कह दो हाल।
वह आ गई तो नहीं आयगी, नहीं आवे तो आ जावे।
बात सुनी मन्त्रीश्वर तदपि, भेद वहाँ नहीं कुछ पावे।

पिता गये हैं कहाँ ? वे तो गये बाहर काज जी ।
अनन्त इस आकाश का, जल बांधने को आज जी ।
बन्धु हित जब पूछ लीना, बोली एम प्रकार जी ।
दाम देकर जूत खाने को, गया बाजार जी ।
भाभी का संवाद पूछना, मंत्री जी अब चाहते हैं ॥३॥

कहो भाभी का हाल कहां गई, तब बाला दरसाती है ।
दिन भर करे परिश्रम पूरा, तब वह खाना खाती है ।
अभी एक के दो करने में, लगी हुई यह उसका हाल ।
मंत्री समझ सका नहीं कुछ भी, आया भूप के सन्मुख चाल ।

कह दिया सब हाल नृप को, जो सुना था कान जी ।
गुण गरिमा रूप का भी, पौरुषा लो जान जी ।
आश्चर्यकारी थे वचन, सुन रह गया मैं दंग जी ।
आज तक ऐसा न देखा, बोलने का ढंग जी ।
मन्त्री मुख से सुन नरपतिजी, अपने भाव दरसाते हैं ॥४॥

जाओ उसके पिता पास यों, कहो भूप इसको चावे ।
आज्ञा पाकर चल मन्त्री जी, किसान के घर पर आवे ।
कहा सभी वृत्तान्त उसे, नृप तेरी कन्या को व्यावे ।
हाँ भर ली तब बढ़े ठाठ से, पाणिग्रहण वहा करवावे ।

विवाह करी महलों में लाये, पूछे भूपति हाल जी ।
रहस्यमय जो शब्द बोले, बतला दो सब सार जी ।
नम्र वचन कर जोड़ बोली, मैं बना रही भात जी ।
प्रश्न का उत्तर वही था, और नहीं अवदात जी
नृप मन्त्री नहीं समझा, उसको क्षण भर में बतलाते हैं ॥५॥

माता मेरी गई थी पीहर, कब आने का प्रश्न किया ।
नदी मार्ग में आती थी, सो सोच यही मैं जवाब दिया ।
पिता प्रश्न का उत्तर था, वे गये बांधने को छप्पर आज ।
अब भ्राता की बात कहूँ मैं, सुनो ध्यान देकर महाराज ।

यद्यपि है दाम देकर, जूत सिर पर खाय जी ।
मल-मूत्र पर जा लेटता, शुद्ध रहे कुछ नाय जी ।
भाभी गई थी दाल करने, दो मर्मी दरसाय जी ।
सुन भूप कहता धन्य जीवन, नारी तुम सी पाय जी ।
चमत्कार हो मेरी आज में, भूपति यह दरसाते हैं ॥६॥

ज्ञान दान में बने सहायक, वही यहां पर पावे ज्ञान।
इनमें जो अन्तराय देय वह, बन जाता है महा अज्ञान।
अतः सदा ही ज्ञान बढ़ाकर, करो खूब ही इसका दान।
यही आतमा के संग रहता, ऐसा है जिनवर फरमान।

'प्राज्ञ' गुरुवर ने किया है, संघ पर उपकार जी।
कायम किया स्वाध्यायी संघ हो, धर्म का प्रचार जी।
वेद निधि-निधि चन्द्र वर्ष, चालू किया यह धार जी।
'सोहन' मुनि कहे भव्य पुरुष ही, जीवन सफल बनाते हैं ।।७।।

१८ लक्ष्मी चंचल है

(तर्ज —अष्टपदी लावणी)

सुकृत कर आगे काम आवे, नहीं कोई वस्तु संग जावे।
नाहक क्यों चित में ललचावे, वचन यह ज्ञानी फरमावे ।।टेर।।

शुभाशुभ भुगते नर-नारी, व्यर्थ है चिन्ता जग सारी।
लगाता दौड़-धूप भारी, बनूँ मैं सब में धनधारी।

दोहा—किन्तु भाग्य में जो लिखा, वही मिलेगा आय।
इससे ज्यादा कीमती, कुछ भी नहीं होने का भाय।

सदा यह गुरुजन दरसावे ।। वचन ।। १ ।।

वसन्तपुर भू पर सुखकारी, बसे तिहां धन्ना धनधारी।
प्रमुख है सब में व्यापारी, इसी से नाम हुआ जहारी।

दोहा—दान कभी देवे नहीं, यह मोटी अन्तराय।
जोड़-जोड़ कर संग्रह करता, और न आवे दाय।

सुने नहीं सुकृत बतलावे ।। वचन ।। २ ।।

एक दिन ऐसा स्वप्न आया, कहे यों लक्ष्मी सुन भाया।
भाग्य अब तेरा पलटाया, रहूँ नहीं यह मन में आया।

दोहा—सेठ कहे कहाँ जायेगी, कह दो मन की बात।
रमा कहे सुन्दर घर जाऊं, है दानी विख्यात।

यहाँ से कोस अस्सी जावे ।। वचन ।। ३ ।।

नगर पुर दीना बतलाई, बाद में लक्ष्मी विरलाई।
आँख जब खोल लखा वाहीं, नजर में कोई नहीं आई ।।

दोहा—सूर्योदय उठ सेठजी, कीना ऐसा काम ।
निज सम्पत्ति सब बेचकर, कर लीने हैं दाम ।
द्रव्य से हीरे पन्ने लावे ।। वचन ।। ४ ।।

यष्टियें तीन भवन लाई, दिये सब भर उनके मांही ।
छप्पर में रखकर सुख पाई, रात-दिन देखे उन तांई ।।

दोहा—एक समय वर्षा हुई, आई सरिता पूर ।
छप्पर उड़कर गिरा नदी में, चला गया है दूर ।
देख यह धन्ना घबरावे ।। वचन ।। ५ ।।

स्वप्न यह सच्चा दरसाया, देख लूं सुन्दरपुर आया ।
सेठ को सुन्दर घर लाया, आसन पर ऊंचे बैठाया ।।

दोहा—भोजन करने ले गया, अपने संग उस वार ।
धन्ना देखे इधर-उधर, वहाँ पड़ी मिली तैय्यार ।
देख कर नयन नीर आवे ।। वचन ।। ६ ।।

अश्रु लख सुन्दर कहे भाई, कहो क्यों चिन्ता चित छाई ।
बात दिल की दो दरसाई, रखो मत शंका मन मांही ।।

दोहा धन्ना कहे ये यष्टियां, आई कैसे भ्रात ।
यही समझना चाहूँ आपसे, और नहीं कोई बात ।
खोल दिल सच्ची दरसावे ।। वचन ।। ७ ।।

कहे यों सुन्दर सुनो भाई सरिता बहती पूर आई ।
इन्हें लख मैंने निकलाई, दाम दो देकर घर लाई ।।

दोहा—जब से इनको लाय के, रखी है इन ठोर ।
तब से ही ये यहाँ पड़ी हैं, उठा न रखी और ।
सम्बन्ध सब सच्चा बतलावे ।। वचन ।। ८ ।।

कहे सब धन्ना उसका हाल, भरा है गहरा इसमें माल ।
यष्टियें भरी मैं हीरे डाल, स्वप्न का सुना दिया सब हाल ।

दोहा—सुन्दर कहे हे बन्धुवर, ले जावे सब माल ।
इतने दिन मालूम नहीं मुझको, अब समझा मैं हाल ।
धन्ना कहे नहीं मेरे भावे ।। वचन ।। ९ ।।

लिखा है आप भाग्य मांही, छोड़ दिया ले जाता नांहीं।
मेरे मन अब ऐसी आई, कर्म दूं काट सकल भाई।

दोहा—आकर अपने स्थान में, लेकर संयम भार।
उत्तम करणी करके अन्त में, कीना भव जल पार।
धार दिल में यदि सुख चावे ॥ वचन ॥ १० ॥

कथा सुन सुकृत कर लीजे, सुपातर अभय दान दीजे।
मिले तो सत्संगत कीजे, मानव भव सफल बना लीजे।

दोहा—'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, कहे यह बारम्बार।
यदि जगत से तिरना चाहे, लो सुकृत दिल धार।
पार इस जग से हो जावे ॥ वचन ॥ ११ ॥
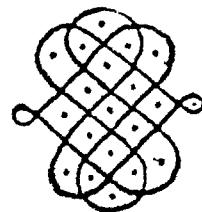
१६ छोटी तीज

दोहा—महावीर रटते रहो, श्वांस श्वांस के मांय ।
श्वांस व्यर्थ जावे नहीं, इस विध प्रभु रम जाय ।।१।।

श्रावण शुक्ला तीज को, झूलाझूलण काज ।
कीमती वस्त्राभरण सज, आई नार समाज ।।२।।

जल भरने आई वहां, कृश तन दुखिया नार ।
नयनाश्रु लख पूछती, कह दो कौन विचार ।।३।।

(तर्ज—प्रात: उठीने समरिये हो भवियण)

सावण का सतरा गया, हे क, सजनी आई लौड़ी तीज ।
देख व्यवस्था आज की, हे क, मन में आ गई खीज ।। १ ।।
कि कोई मत पूछो, हे क सजनी, मारा मन की वात ।।टेर।।

एक दिवस मैं भी यहां, हे क सजनी, रहती आनन्द मांय !
किन्तु कर्म वश आ गई, हे क सजनी, मुझ पर विपत्ति सवाय ।। २ ।।

अल्प उम्र के मांय ने, हे क सजनी, हो गई विधवा नार ।
दु:ख गिरि से दब गई है, हे क सजनी, नहीं पूछी कोई सार ।। ३ ।।

एक पुरुष करुणा करी, हे क सजनी, देतो पुणिया लाय ।
लोक हृदय शंका धरे, हे क सजनी, बिगड़ी इस संग मांय ।। ४ ।।

उपेक्षा देख समाज की, हे क सजनी, हो गई उण के साथ ।
ले जाकर वह शहर में, हे क सजनी, बेची वेश्या हाथ ।। ५ ।।

चन्द समय रख पास में, हे क सजनी, कर दी घर के बाहर ।
पड़ी-पड़ी सड़ती रही, हे क सजनी, दु:ख जाणे करतार ।। ६ ।।

मैं रोती इस कारणे, हे क सजनी, देखी नार समाज ।
पूर्ण बात स्मरण हुई, हे क सजनी, दृश्य देख कर आज ।। ७ ।।

कौन सार ले दुखिया तणी, हे क सजनी, रोऊँ झार झंझार ।
किण आगे जाकर कहूँ, हे क सजनी, सुने कौन पुकार ॥ ८ ॥

सेठाण्यां सुन वारता, हे क सजनी, बोली यों तत्कार ।
कल स्थानक में आवज्यो, हे क सजनी, होगा वहां निस्तार ॥ ९ ॥

मुनिवर देवे देशना, हे क सजनी, आई दुखिया नार ।
सभा भवन में हो खड़ी, हे क सजनी, बोली अश्रु डार ॥१०॥

सुनकर सब घृणा करे, हे क सजनी, कहे ये बिगड़ी नार ।
सेठाण्यां दो खड़ी हुई, हे क सजनी, बोली यो ललकार ॥११॥

बहन हमारी धर्म की, हे क सजनी, हम हैं तेरी लार ।
सुणी लोक विस्मित हुआ, हे क सजनी, अब क्या करे विचार ॥१२॥

सेठाण्यां लख पक्ष में, हे क सजनी, दोनों सेठ हो त्यार ।
सभा भवन में यों कहे, हे क सजनी, हम सब इण री लार ॥१३॥

सब जन सांभलो, हे क सजनो, दोषी सकल समाज ।
सार न पूछी जाय ने, हे क सजनो, सोचो गहरी बात ॥१४॥

जिम बीती इस साथ में, हे क सजनो, वैसी हम से होय ।
कहो कितो दुख उपजे, हे क सजनो, लीज्यो दिल में जोय ॥१५॥

ले ली उसको जाति में, हे क सजनो, करके पूर्ण विचार ।
अब गलती होवे नहीं, हे क सजनो, सदा करे संभार ॥१६॥

उसी समय सब सेठिये, हे क सजनो, ले लीना यह नेम ।
गरीब विधवा अनाथ से, हे क सजनो, रखें पूरा प्रेम ॥१७॥

सार संभार किये बिना, हे क सजनो, नहीं ले मुंह में अन्न ।
सुख साधन पहुंचाय के, हे क सजनो, जाने जीवन धन्न ॥१८॥

गुरुदेव मुख से सुनी, हे क सजनो, रच दीनी यह ढाल ।
'प्रताप' कृपा 'सोहन' कहे, हे क सजनो, रखो हरदम ख्याल ॥१९॥

सम्वत् बीस सौ बाईस में, हे क सजनो, विजयनगर गुलजार ।
गुरुकृपा चौमास में, हे क सजनो, बरते मंगलाचार ॥२०॥

□ □ □

२० | खाली हाथ मत जाना

(तर्ज—तावड़ो)

पाय नर उत्तम जिन्दगानी रे-रे,
व्यर्थ इसे मत खोय समझ यह, वापिस नहीं आनी रे ।।टेर।।

वसन्तपुर में सेठ धनावा, धनपति धनद समान—सज्जनो,
रूपवती गुणवती नार है, शची रूप लो मान ।। १ ।।

पुत्र जिन्हों के दान मान, दो विनयवान गुणवान—सज्जनो,
सभी कार्य में दक्ष, लोक में पावे अति सम्मान ।। २ ।।

काम सेठ का अच्छा चलता, करे सभी गुणगान—सज्जनो,
किन्तु भाग्य का पता नहीं हैं, मत कीज्यो अभिमान ।। ३ ।।

सेठ सेठाणी एक साथ ही, दोनों गया परलोक—सज्जनो,
सम्पत्ति सारी उन्हीं साथ गई, विगड़ गया सब थोक ।। ४ ।।

दोनों भाई चले दिसावर, पेट भरन के काज—सज्जनो
कंचनपुर में चलकर आये, तजकर सकल समाज ।। ५ ।।

घूम रहे हैं दोनों बंधव, कोई न पूछे सार—सज्जनो,
परिचय वाले नहीं यहां पर, मन में करे विचार ।। ६ ।।

इतने में एक दानी सेठ आ, बोला कहो तुम भ्रात—सज्जनो,
कैसे घूमते कहां से आये, कह दो अपनी बात ।। ७ ।।

दोनों बंधव कहे सेठ हम, आये पेट के काज—सज्जनो,
और आपको क्या बतलायें, इसका करो इलाज ।। ८ ।।

सेठ कहे मैं रखलूँ तुमको, करो खूब व्यापार—सज्जनो,
भरी माल से हाट सौंप दूँ, रहो सदा हुशियार ।। ९ ।।

अलग-अलग तुम जाओ दिसावर, लिख दूँ खत इसवार—सक्जनो,
आय सभी तुम्हारी होगी, नहीं लूँ पाई लिगार ।।१०।।

किन्तु शर्त एक मेरी पहले, कर लेवो स्वीकार–सज्जनो,
पैर हाट पर रखते ही सब, धन पर मुझ अधिकार ॥११॥

मंजूर करा कर भेज दिये हैं, पृथक्-२ दोऊँ स्थान–सज्जनो,
बम्बई अरु कलकत्ते का अब, संभला दीना काम ॥१२॥

दान मल यों सोचे दिल में, कब आ जावे स्वाम–सज्जनो,
अतः सदा रहूँ सावधान में, बना लेऊँ निज काम ॥१३॥

संध्या समय लख आय अर्थ सब, रख देता अन्य स्थान–सज्जनो,
कभी न गलती हो जावे, यह पूरा रखता ध्यान ॥१४॥

मान हाट ले कलकत्ते की, करने लगा विचार–सज्जनो,
सेठ आयेगा उसी समय, मैं लूंगा अर्थ निकाल ॥१५॥

पांच साल पश्चात् सेठ ने, दिल में किया विचार–सज्जनो,
जाकर के अब दोनों हाट का, लेऊँ काम संभार ॥१६॥

दान मल के पास संपत्ति, हो गई कोटि दीनार–सज्जनो,
मन में सोचे क्यों न सेठजी, लेवें संभार ॥१७॥

इतने में आ गये सेठजी, दीनी हाट संभलाय–सज्जनो,
सेठ देख विस्मय हो बोला, कुछ तो बात सुनाय–१८॥

दानमल कहे सुनो सेठजी, करूँ निजी व्यापार–सज्जनो,
पूंजी की अब कमी नहीं है, संग्रह किया अपार ॥१९॥

सेठ वहाँ से कलकत्ते आ, दीना हाट पर पैर–सज्जनो,
मानमल घबराकर, जल्दी करने लगा धन का ढेर ॥२०॥

सेठ पकड़ कर कहे यहां से, नीचे उतर तत्काल–सज्जनो,
रोकर बोला मेरा मुझको, लेने दो कुछ माल ॥२१॥

स्मरण करो तुम अपनी शर्त को, क्या कर आये आज–सज्जनो,
प्रमाद किया उसका फल भोगो, भूल गये क्यों बात ॥२२॥

दो सेवक सम हैं संसारी, काल सेठ लो मान–सज्जनो,
सजग रहा सो लिया साथ में, सो गया हो मस्तान ॥२३॥

अतः समय पर धर्म ध्यान कर, ले लो गठड़ी साथ–सज्जनो,
'ज्ञान' प्रसादे 'मोहन' मुनि कहे, किया नवेका साथ ॥२४॥

[illegible] —सज्जनो,
[illegible] कृष्णा [illegible] को, दीना जोड़ सुनाय ॥२५॥

२१ सरलता जीती : ईर्ष्या हारी

(तर्ज—राधेश्याम रामायण)

जीवन ऐसा बना यहाँ पर, अन्य पुरुष शिक्षा पावें ।
अपनी ऋजुता देख, दूसरों का भी जीवन पलटावे ।।१।।

इक घर में थे दो बंधव, दोनों में प्रीति थी भारी ।
किन्तु द्वेष रखती देवर पर, क्रूर ज्येष्ठ बंधव नारी ।।२।।

भाभी के मन में ईर्ष्या थी, वह ऐसा अवसर देख रही ।
इनको घर से बाहर निकालूं, तभी शांति दिल होय सही ।।३।।

एक वक्त दो हजार रुपये, चोर चुराकर ले गये ।
तब भाभी ने कहा अन्य नहीं, देवर ने ही उठा लिये ।।४।।

आये सन्तरी पकड़ ले गये, भाभी दिल में हरसाई ।
एकान्त स्थान में पूछा उसने, सच्चा हाल दिया दरसाई ।।५।।

लगे खोजने तभी सिपाही, माल सहित तस्कर लाये ।
छोड़ इसे सब माल दिलाया, भाभी दिल में शरमाये ।।६।।

इतना द्वेष आ गया एक दिन, दिल में ऐसा धार लिया ।
मंगा संखिया नौकर कर से, भोजन अन्दर डाल दिया ।।७।।

भोजन करते लघु बन्धव को, मूर्छा आई घबराया ।
तभी भृत्य ने सभी हाल जा, बड़े भ्रात को बतलाया ।।८।।

ले जा बंधव को अस्पताल में, डाक्टर को झट दिखलाया ।
डाक्टर ने भी करके सूचित, कोतवाल को बुलवाया ।।९।।

कर कब्जे में बांध मुस्किये, भौजाई को ले आये ।
वह भी बैठी सोच रही मन, किये कर्म सन्मुख आये ।।१०।।

चन्द समय पश्चात् होश में, आकर खोले उसने नैन ।
लगा पूछने कोतवाल तब, बोले उसने ऐसे बैन ।।११।।

नहीं दोष भाभी का कुछ भी, झूठा कलंक चढ़ाया है ।
फेल हो गया कक्षा में, तब मैंने संखिया खाया है ॥१२॥

इन बयान से मुक्त करी, भौजाई घर पर आई है ।
सोच रही है देव पुरुष, वे मुझे आसुरी छाई है ॥१३॥

आत्मघात के अपराधी को, छह महिने का दण्ड दिया ।
रहा जेल में किन्तु उसने, भाभी को नहीं दोष दिया ॥१४॥

सजा भोग जब घर पर आया, भाभी तब दौड़ी आई ।
चरण पकड़ कर कहे, देवर जी बुद्धि मेरी पलटाई ॥१५॥

कभी न द्वेष करूंगी दिल से, शपथ कन्त की खाती हूँ ।
मेरी इज्जत रखी आपने, सदा आप गुण गाती हूँ ॥१६॥

मनुज नहीं हो देव आप, यह मेरे दिल में भाव भरे ।
सद्व्यवहार देख कर, मेरे क्रूर कलह के भाव टरे ॥१७॥

पहले अपने को मोड़ो, दुनिया तो अपने आप मुड़े ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, उलटा-सीधा होय जुड़े ॥१८॥

२२ देह : मिश्री की डली
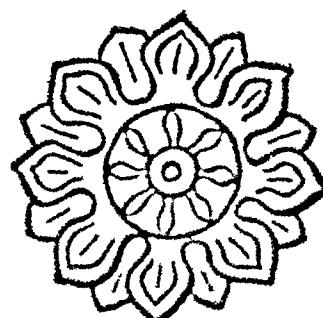
(तर्ज—लावणी खड़ी)

चरण शरण ले गुरुदेव की, नरतन का फल मिल जावे ।
वरना समझो मिश्री डली सम, पानी बनकर गल जावे ।।टेर।।

एक समय दिल्ली का बादशाह, सोता अपने महल मंझार ।
मध्य रात को नींद खुली, तब पड़ी कान में यह झंकार ।।
यमुना नदी क्यों आज रो रही, मन मांहि यों करे विचार ।
भेज सन्तरी बुला बीरबल, पूछा है रोने का सार ।
कहे बीरबल सुनो जहांपनाह, नदी आर्य यह कहलावे ।।१।।

ऐसा रस्म है हिन्दू जाति में, जब कन्या घर से आवे ।
रोती हुई वह होय रवाना, उसे ससुराल में पहुँचावे ।
भांति - भांति से समझा करके, पुनः लौट घर पर जावे ।
जाते मार्ग में रुदन श्रवण कर, दिल में अति करुणा लावे ।
जाकर उसका दुःख मिटाऊँ, धार हृदय में चल आवे ।।२।।

नम्बर नोट कर चला भवन के, निज स्थान पर चल आया ।
नौकर भेज सवेरे उसको, अपने घर पर बुलवाया ।
बुड्ढा देख हृदय में कम्पा, किस कारण सन्तरी आया ।
सोचे गुनाह आज तक मुझसे, कभी न कुछ भी हो पाया ।
चला सन्तरी साथ डोकरा, सदन बीरबल के आवे ।।३।।

शिष्टाचार युत् कहे बीरबल, बैठो क्यों घबराते हो ।
बात करी फिर पूछी हकीकत, क्यों आप रात में रोते हो ।
शंका खोल सब साफ कहो, क्यों मन मांही कलपाते हो ।
इस तरह रुदन कर नहीं, कहने से मेरा चित्त जलाते हो ।
कहे सिसकता सुनो बीरबल, दुःख दुगुना अब हो जावे ।।४।।

जवान होकर पुत्र मर गया, खाने को दाना नांही ।
एक समय मैं खूब कमाता, खूब उड़ाता मन लाई ।
मेरा सोचना सबही मिट गया, भाग्य दशा पलटा खाई ।

रात मांहि दुःख याद आ गया, जिससे दिल गया घबराई ।
सौ रुपये रखे सामने, कहे आप यह ले जावे ॥५॥

करके मेहनत लेता हूँ मैं, नहीं मुफ्त का कुछ खाता ।
गरीब हूँ पर नहीं भिखारी, यही आपको बतलाता ।
मिश्री डली उठा हाथ से, दीनी बीरबल उसके हाथ ।
चढ़ा आप कुरसाण इसे और, बना देवें हीरा साक्षात् ।
बना तत्क्षण हीरे सम वह, बीरबल को दिखलावे ॥६॥

देख बीरबल कहे इसे ले, सभा भवन में चल आवे ।
कीमत होगी इसकी पूरी, नहीं आप शंका लावे ।
विधि बता दी लाने की और, कीमत इतनी बतलावे ।
उसी मुआफिक लेकर उसको, सभा भवन में चल आवे ।
वेश विदेशी देख बादशाह, सबके आगे बुलवावे ॥७॥

पूछ लिया तुम कहाँ से आये, क्या सौदा संग में लाये ।
कहे हुजूर मैं हूँ व्यापारी, हीरों के नग बनवाये ।
देश - देश में फिरूँ बेचता, और सभी तो बिकवाये ।
किन्तु कीमती रहा एक नग, कोई न कीमत दे पाये ।
कीर्ति सुनकर आया हूँ मैं, ले लें आप पसन्द आवे ॥८॥

सुवर्ण डिब्बी से निकाल हीरा, दिया बादशाह के कर में ।
देख उसी क्षण कहे बीरबल, पसंद आय रखलें घर में ।
पहले जौहरी बुला परीक्षा करवालें, यहाँ दिन भर में ।
यह कह करके गया बादशाह, करने स्नान स्नानागार में ।
सोचे बीरबल भेद खुलेगा, यदि जौहरी कर जावे ॥९॥

लेकर आया स्नानागार में, कहे बीरबल जाऊँ काम ।
पीछे से आ जावे जौहरी, विलम्ब होगी सुनलो स्वाम ।
अतः यहाँ पर रख के जाऊँ, दिया पूछ लें उनसे दाम ।
उचित समझ में आवे आपके, वही करा लेवेंगे काम ।
रखना हीरा ऐसे स्थान में, पानी पड़ कर गल जावे ॥१०॥

स्नान करके गया बादशाह, भोजन करके हुआ विचार ।
हीरा भूल कर आ गया मैं तो, जाकर लाऊँ करूँ न बार ।
आकर देखा हीरा नदारद, दिया भृत्य को दी फटकार ।
लाकर जल्दी देवो हीरा, नहीं तो फाँसी है तैयार ।
[illegible] आया बीरबल, देख बादशाह [illegible] ॥११॥

हीरा तू दे गया बीरबल, पता न उसका कुछ पाया ।
इन चारों के सिवा अन्य नहीं, अभी कोई यहाँ पर आया ।

कहे बीरबल पता लगाकर, अभी चोर सन्मुख लाया ।
सुनकर बादशाह गया वहाँ से, फिर इनको यों समझाया ।
बाहर किसी से मत कहना, यह नहीं तो फांसी लटकावे ।।१२।।

वापिस आकर कहे जहाँपनाह, नहीं हीरा है इनके पास ।
बढ़िया चीजें होय जगत में, उनकी फरिश्ते करते आस ।
वे ही हीरा ले गये यहाँ से, क्या शक्ति ये ठहरे दास ।
नहीं हीरा है इनके पास में, जमा दिया पूरा विश्वास ।
मेरी तो है अरजी आपसे, यह जाहिर नहीं हो जावे ।।१३।।

देश विदेशों में जाकर, यह कहे बात तब होवे हांस ।
दिल्ली बादशाह रख न सका, छोटा सा हीरा अपने पास ।
कैसे संभाल सकेगा इतनी बड़ी, सल्तनत निज आवास ।
अतः गिणा दे उनको उतनी, जितनी मांगें धन की रास ।
सत्य कथन है तेरा बीरबल, पता न उसको लग जावे ।।१४।।

सभा भवन में बुला उसे यों, कहे बीरबल कहदो दाम ।
हीरा आपका पसन्द आ गया, ले लीना है दिल्ली स्वाम ।
कहे व्यापारी कीमत इसकी, सवा लक्ष देते जापान ।
जो इच्छा हो गिन दे यहाँ से, जाऊँ वापिस अपने स्थान ।
सवा लक्ष के ऊपर ये अब, पाँच सहस्र मोहरे पावे ।।१५।।

लेकर अपने स्थान चला फिर, मिला बीरबल के घर आय ।
कहे द्रव्य सम्भालो अपना, दिया बीरबल ने समझाय ।
हिकमत करके मिश्री डली को, दीना आपने हीरा बनाय ।
अतः द्रव्य है सभी आपका, कह कर उसको घर पहुँचाय ।
इस दृष्टान्त का भाव अभी यों, ज्ञानी गुरुवर दरसावे ।।१६।।

मिश्री डली सम देह मिला है, चढ़ा इसे धरम कुरसाण ।
बीरबल सम मिले धर्मगुरु, इनकी बात जो लेवे मान ।
कीमत मिलेगी पूरी उनको, पावेंगे वे शिवपुर स्थान ।
यदि नहीं कुरसाण चढ़ाया, फूटी कौड़ी मिले न जान ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, गुरु शरण ले सुख पावे ।।१७।।

□ □ □

२३ कलियुगी सन्तान

(तर्ज—लावणी खड़ी)

सुनो लगाकर ध्यान सज्जनो, कैसा है संसार स्वरूप ।
मोह मस्त हो भूल रहे हो, बतलाऊँ स्वार्थ का रूप ।।टेर।।

रहे शहर में सेठ दम्पती, आनन्द में दिन जाते हैं ।
घर में सम्पत्ति अच्छी है, नित खाते मौज उड़ाते हैं ।
सभी तरह का साधन है, पर पुत्र बिना दुःख पाते हैं ।
धर्म कर्म सब भूल, अनेकों देवी देव मनाते हैं ।
सब उपाय भी व्यर्थ हो गये, सांचे कर्म की गति अनूप ।।१।।

अन्तराय का शमन हुआ तब, आया जीव उदर के मांय ।
आशा दिल की फली समझकर, दोनों का दिल अति हरसाय ।
जन्म पुत्र का हुआ, मिठाई बांटी जा घर घर के मांय ।
लोक सभी आ देवे बधाई, मंगल गावें सधवा आय ।
महोत्सव कर जाति जिमाई, दिल में धर कर भारी चूप ।।२।।

देख पुत्र का बदन दम्पति, फूले नहीं समाते हैं ।
लाड़ प्यार से बड़ा करें, नित गोदी मांहि रमाते हैं ।
कपड़ों पर मल मूत्र करे है, फिर भी घीन न लाते हैं ।
यदि थोड़ी भी होय बीमारी, वैद्य लार फिराते हैं ।
पुत्र दुःख में दुःखी हमेशा, सहते [illegible] [illegible] ।।३।।

शाला में नित भेजें पढ़ने, नई पोशाक सजा कर त्यार।
मचल जाय जाने में तब ही, देता पैसे चार निकाल।
पुस्तक पट्टी और किताबें, लाकर देता हो लाचार।
आप स्वयं रहे आधे पेट, पर करे पुत्र की सार संभार।
सोचे दिल में पढ़ लिखकर यह, सेवा करेगा धर कर चूप ।।५।।

आशा बांध कर बैठे दम्पति, लाला बी. ए. पास करी ।
आते ही घर आई सगाई, लाला जी से बात करी।
कहता है हो लड़की सुन्दर, गौर वर्ण सर्वाङ्ग परी।
नई फैशन में रहने वाली, रहे क्लबों में साथ खड़ी।
वैसी हो तो पसन्द आयेगी, नहीं तो मुँह से रहना चूप ।।६।।

मन पसन्द की बीबी लाया, फिरे सदा दोनों ही संग।
मात पिता लख उन दोनों को, शरमा कहते यह क्या ढंग।
बैठे हैं हम जाति-न्याति में, कुछ तो देखो यहां का रंग।
होय लोक में बात हमारी, बिगड़े कुल का सुन्दर ढंग।
लाला कहता क्या है इसमें, तज दो सभी पुरातन रूप ।।७।।

नया जमाना नया कमाना, नये वेश में रहना है।
सूट बूट अरु कोट पेन्ट बिन, जीवन व्यर्थ गमाना है।
खाना पीना होटल का हो, डबल रोटी मन भाना है।
करे नौकरी दफ्तर की, सो दिन भर मौज उड़ाना है।
सदा रहे मुख बीड़ी पान से, भरा साथ में होवे सोंप ।।८।।

सुनकर पिता यों कहे पुत्र, तू है मेरे एकाकी लाल।
क्यों तू ऐसी बातें करता, जैसे करता कोई वाल।
पढ़ लिखकर हुशियार हुआ है, कुछ तो रक्खो दिल में ख्याल।
सभी ढंग दुनिया का लखकर, चलना अपने घर की चाल।
विना समझ से बात करे तो, लोग कहेंगे है वेवकूफ ।।९।।

वीत गया युग यह कहने का, नया जमाना आया है।
रहन सहन और खान पान, यह नया संग में लाया है।
किसी तरह प्रतिबन्ध नहीं, जो जिसके मन में भाया है।
करे वही यह स्वतन्त्रता का, सबको पाठ पढ़ाया है।
समझो अब तो वदल गया है, धोती और कुरते का रूप ।।१०।।

लाला को वेतन महीने को, ढाई सौ रुपये आते हैं।
तेल साबुन अरु खान-पान में, सब पूरे हो जाते हैं।
यार दोस्त मिल करके सब ही, रोज सिनेमा जाते हैं।
होटल पर जा करके सब ही, आमिष अण्डे खाते हैं।

कुल की दी मर्यादा छोड़, और नया बनाया ऐसा ग्रुप ॥११॥

मात पिता की गई जवानी, पास बुढ़ापा आया है।
काम काज करने की हिम्मत, रही न दिल घबराया है।
पुत्र बहू के हो गये आश्रित, मन को यों समझाया है।
अब तो लाला सेवा करेगा, इसको योग्य बनाया है।

इसके पीछे खर्च किया सब, इसे बनाया जैसे भूप ॥१२॥

बीवी बच्चे लाला जी सब, रहे मस्त में होकर त्यार।
मात पिता अब बैठे देखें, कौन करे उनकी संभार।
लाला दिल में सोचे कैसा, आया मेरे सिर पर भार।
खाना पहनना सभी तरह का, खर्चा हो गया मेरे लार।

बैठे बैठे हुक्म चलावे, मैं तो सहता कड़वी धूप ॥१३॥

बीवी और बच्चों के हित वह, वस्त्र कीमती लाता है।
पोलेस्टर और टेरेलीन के, सूट पेन्ट सिलवाता है।
नाइलोन की साड़ी लहंगा, जॉरजट मंगवाता है।
मात पिता के फटे वस्त्र नग्न, नहीं ध्यान में लाता है।

आप स्वयं पोशाक बदलकर, करता दिन में नाना रूप ॥१४॥

मात पिता जब हित की कहें, बदल त्योरियां कहता लाल।
दिन भर बैठे बक-बक करते, जिन्हें नहीं है कुछ भी ख्याल।
सारा जीवन व्यर्थ गंवाया, केवल पेट को लीना पाल।
पैसा कुछ भी नहीं कमाया, कहूं कहां तक घर का हाल।

करें निठल्ली बातें ऐसी, बुद्धि हो गई है विद्रूप ॥१५॥

यदा कदा मुख से कह देता, अब नहीं खर्चा मेरे पास।
कहाँ तक सेवा करूं तुम्हारी, सेवा करते हो गया नाश।
काल कहाँ पर चला गया, जो आकर मुझको दे अवकाश।
रात दिवस यों रखे भावना, मौके मौके देता भास।

लाला दिल में यही समझता, यह है मुझ पर बोझे रूप ॥१७॥

मात पिता ने बाल्यकाल में, जिससे रक्खा पूरा प्यार।
अब वह समझे खुदा स्वय को, कौन है मेरा पालनहार।
ऐसा कृतघ्नी पुत्र जगत में, भूल गया है सब उपकार।
तभी तो उनकी हालत बिगड़े, कैसे हो जग से उद्धार।

'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि माने, बिरले मात-पिता प्रभु रूप ॥१८॥

२४ | शुद्ध आय
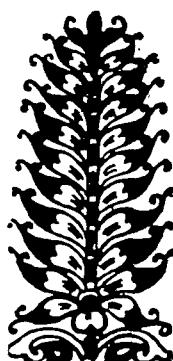
(तर्ज—लावणी खड़ी)

नीतिवान का पैसा जग में, उत्तम काम बनाता है।
पैसे खातिर करे अनीति, आखिर वह पछताता है ॥टेर॥

एक शहर में भूप यशोधर, नामी था गुणधामी था।
सभी तरह से योग्य महिपति, प्रजाजनों का हामी था ॥
एक समय यह दिल में आई, भवन बनाऊँ सुन्दराकार।
बुला मिस्तरी हुक्म सुनाया, करो भवन जल्दी तैयार ॥
उस ही क्षण में काम चलाया, किन्तु नहीं बन पाता है ॥१॥

बुला ज्योतिषी को यों पूछा, भवन नहीं क्यों हो तैयार।
आकर छत तक क्यों गिर जाता, कह दो इसका हो जो सार ॥
कहे ज्योतिषी सुनलो राजन, अनीति द्रव्य नहीं आवे काम।
अतः तभी तक नहीं बनेगा, नहीं हो नीति वाला दाम ॥
शुद्ध आय की बीस मोहरें, नींव मांहि रखवाता है ॥२॥

श्रावक जिनमति उसी शहर का, न्यायोपार्जित रखता दाम।
राजा उसे बुला कर कहता, सारो मेरा तुम यह काम ॥
सेठ कहे नहीं देता पैसा, न्याय युक्त है मेरा माल।
अन्याय कार्य में कभी न देता, साफ-साफ कहता मैं हाल।
राजा कहे नहीं जाने मुझको, इतनी बात बनाता है ॥३॥

अभी हुक्म देकर के सारे, घर का द्रव्य उठा लूंगा।
करके बुरा हवाल तुम्हारा, देश बाहर निकला दूंगा ॥
कहे जिनमति कार्य आपका, होगा यह उपयुक्त नहीं।
लूटा धन नहीं होय नीति का, बुला पूछ लो अभी सही ॥
बुला ज्योतिषी को झट लावो, भृत्यों को फरमाता है ॥४॥

कहे नजूमी भूप अर्थ यह, न्याय युक्त नहिं कहलावे ।
इच्छा के विपरीत लिया, वह दोष युक्त ही बतलावे ।।
कहे भूपति पैसे–पैसे में, क्या अन्तर दरसावे ।
मेरे द्रव्य और इनके द्रव्य में, फर्क होय सो दिखलावे ।।
मंगा मोहरें पाँच–पाँच वहाँ, सन्मुख में धरवाता है ।।५।।

बुला वहाँ के राज्य मन्त्री को, यह आदेश सुनाया है ।
राजकोष की पाँच मोहरें, देकर के समझाया है ।।
गांव बाहर जो योगी रहता, उत्कट तप का धारी है ।
वृक्ष डाल पर लटके औंधा, पंचाग्नि तपकारी है ।।
जाकर उसके रखो वस्त्र में, फिर यों ध्यान दिलाता है ।।६।।

गुप्त स्थान में छिपकर बैठो, पूरा रखो इसका ध्यान ।
यह पैसा किस काम में आवे, क्या-क्या मंगवावे सामान ।।
उसी मुआफिक करके मन्त्री, लुक कर बैठा तरुवर छाय ।
क्षण बाद ही ध्यान खोल कर, योगीजी चल वहाँ पे आय ।।
इधर-उधर का काम निपट कर, फिर लंगोट उठाता है ।।७।।

देख मोहरें पाँच सामने, तत्क्षण मन में हुआ विचार ।
तप-बल से हो देव प्रसन्न, यहाँ रख दीनी है पाँच दिनार ।।
सद्य मंगाया मद्य मांस, और साथ में गणिका सुन्दराकार ।
मार्ग भ्रष्ट हो गया योग से, लखकर आया सभा मंझार ।।
जो–जो घटना घटी वहाँ पर, मंत्री सब दरसाता है ।।८।।

पाँच अशर्फी ले श्रावक की, सागर तट पर आया है ।
गुप्त रीति से धीवर पट में, रखकर ध्यान लगाया है ।।
लेकर मच्छियें आया धीवर, मोहरें लख हरसाया है ।
सभी मच्छियें डाल जलधि में, वापिस घर पर आया है ।
अब हिंसा का काम करूँ नहीं, शुद्ध भाव मन लाता है ।।९।।

एक मोहर को वेच त्वरित वह, ऐसी हाट लगाता है ।
दिन भर में जो होय कमाई, गुजर बसर चल जाता है ।।
हो गई पूर्ण हिंसा से ग्लानि, अब भारी पछताता है ।
पूर्व अशुभतर करणी का यह, पाप समझ दुःख पाता है ।।
हिंसा त्यागो हिंसक जन से, सदा यही सुनाता है ।।१०।।

सभी हाल आ मन्त्री ने कहे, भूपति विस्मय पाया है ।
अन्याय न्याय के पैसे का, अब भेद समझ में आया है ।।

अन्याय आय का द्रव्य भूप ने, मूल सहित हटवाया है ।
न्याय युक्त हो द्रव्य उसी को, कोष बीच धरवाया है ।।

शुद्ध आय का भोजन हो, तब मन को शुद्ध बनाता है ।।११।।

धर्म कर्म में लगा भूपति, जीवन सफल बनाया है ।
जिनमति श्रावक बुला पास में, धन्य कह गुण गाया है ।।

श्रावक व्रत लेकर महिपति, दृढ़ धर्मी कहलाया है ।
उत्तम करणी करके श्रावक, उत्तम गति को पाया है ।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, शुद्ध आय सुखदाता हैं ।।१२।।

२५ दीनों की सेवा : तीर्थ का फल

दोहा—वर्धमान फरमान यह, निज दुःख सुख सम जान ।
जीना चाहे जीव सब, प्यारे सबको प्राण ।।

(तर्ज—द्रोण)

करे सहायता सदा दुःखी प्राणी की, महा. दया ला कष्ट मिटावे जी ।
सच्चा तीर्थ का फल जग में, वह मानव पावे जी ।।टेर।।

इक समय कुम्भ का मेला हो रहा भारी, महा. लोग वहाँ लाखों आये जी ।
सब समझे मन के मांय, तीर्थ फल हम ले जायें जी ।
उस समय एक संन्यासी वहाँ पर आया, महा. तरु तल वस्त्र बिछाया जी ।
स्वप्ने में देखे अमर दोय, चल वहाँ पर आया जी ।
कहो लोग मेले में कितने आये, महा. दूसरा सुर फरमावे जी ।।१।।

छह लक्ष यात्री तीर्थ स्थान में आये, महा. कौन फल तीर्थ का पावे जी ।
सब कहे केरल का चमार, रामू यह फल पावे जी ।
कहो रामा कब तीर्थ स्थान को आया, महा. नहीं वह यहाँ पर आया जी ।
घर बैठं फल मिले उसे, वह कार्य बनाया जी ।
करके बात वहाँ दोनों देव सिधावे, महा. तभी निद्रा खुल जावे जी ।।२।।

संन्यासी सोचे लाखों मानव आये, महा. किन्तु फल कोई नहीं पाया जी ।
रामू को तीर्थ फल मिले, ध्यान में नहीं मुझ आया जी ।
जाकर उसको पूछूं शंका टालूं, महा. केरल में चलकर आवे जी ।
रामा का घर पूछ, बात उसको बतलावे जी ।
संन्यासी कहे सच्ची बात कहो अपनी, महा. तीर्थ फल कैसे पावे जी ।।३।।

रामू कहे मैं तीर्थ स्नान नहीं कीना, महा. पास में नहीं है पैसे जी ।
भोजन भी दुर्लभ, कहो तीर्थ मैं करता कैसे जी ।

कहे सन्त, जीवन का काम बताओ, महा. बात रामू उच्चारी जी ।
सुनलो धर कर ध्यान, बताऊँ बीती म्हारी जी ।
तीर्थ हेतु कम खाकर द्रव्य बचाता, महा. अर्थ संग्रह हो जावे जी ।।४।।

एक वक्त गर्भ युत थी मेरी घर नारी, महा. साग की गंध वहाँ आई जी ।
बोली साग मैथी का, ला दो उस घर जाई जी ।
गया साग लाने को जब मैं वहाँ पर, महा. पड़ोसण ऐसे बोली जी ।
ले जावे साग पर है अशुद्ध, कह दिल की खोली जी ।
एक मुर्दे पर मैथी वार कर फेंकी, महा. पति चुग कर के लावे जी ।।५।।

थे सात दिनों से भूखे, योग यह पाया, महा. बात सुन दिल कम्पाया जी ।
खड़े हो गये रोम, नयन में अश्रु लाया जी ।
तत्काल सम्पत्ति घर जाकर मैं लाया, महा. तीर्थ हित संग्रह कीनी जी ।
भूख मिटावन काज, उसे मैं लाकर दीनी जी ।
बात सभी सुन संन्यासी यों सोचे, महा. सत्य है देव सुनावे जी ।।६।।

सुनो सज्जनो द्रव्य साथ नहीं जावे, महा. लाभ इससे ले लीना जी ।
समय पड़े पर, साधर्मी हित में कुछ देना जी ।
प्राणी मात्र हो सदा सुखी यह चावो, महा. भावना उत्तम भावो जी ।
तभी होय कल्याण, बात शुद्ध मन में लावो जी ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि यों कहता, महा. दया रख शुभ गति पावे जी ।।७।।

२६ | सबको प्यारे प्राण
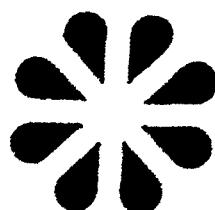
(तर्ज—ख्याल)

ज्ञानी फरमावे सबको, प्यारे हैं अपने प्राण जी ।।टेर।।

भू-मण्डल पर अति रमणीक है, अक्षयपुर शुभ स्थान ।
हाट हवेली कूप सरोवर, सुन्दर है उद्यान जी ।।१।।

अरिमर्दन भूपाल यहाँ का, अरि को शाल समान ।
तन बल, धन बल का, जिनको दर्प महान जी ।।२।।

राणी धारणी धारण करती, शुभ षड्गुण दिल मांय ।
सदा पति की आज्ञा पाकर, मन में अति हरषाय जी ।।३।।

पुत्र प्रियंकर प्रिय मायत को, गुण रत्नों की खान ।
पढ़ लिखकर हुशियार हुआ है, चार नीति का जान जी ।।४।।

एक समय गया भूप, नमाने लेकर सैन्य सवार ।
युद्ध करीने नमा दिये हैं, अज्जड केई भूपाल जी ।।५।।

विजय पताका फहरा अपनी, वापिस आ रहा स्थान ।
शहर निकट में शिविर लगाया, आया नृप को ध्यान जी ।।६।।

पहले जाकर मिलूं प्रिया से, खुश होगी दिल मांय ।
चला सभी को छोड़ वहाँ से, नगर समीपे आय जी ।।७।।

नगर द्वार पर देखा जय ध्वज, पहले दिया लगाय ।
हाट हवेली सभी सजे लख, मन में आश्चर्य पाय जी ।।८।।

शृङ्गारित हो महल द्वार पर, महाराणी तैयार ।
पूजा की सामग्री लेकर, खड़ी करे इन्तजार जी ।।९।।

सधवा भार्या मिलकर, गहरी गा रही मंगलाचार ।
मध्य रात में राग रंग लख, भूपति करे विचार जी ।।१०।।

महाराणी कर जोड़ भूप के, चरण नमाया शीश ।
धन्य हुआ है समय आज का, दर्शन पाकर ईश जी ॥११॥

विस्मित हो महाराजा बोले, कहो प्रिये यह हाल ।
किसने आकर करी सूचना, आवे आज भूपाल जी ॥१२॥

कीर्तिधर मुनिराज पधारे, ज्ञान गुरण की खान ।
आने का संवाद सुनाया, लगा के निर्मल ज्ञान जी ॥१३॥

गया भूप मुनिराज पास में, बोला शीश नमाय ।
मेरे मन में क्या शंका है, दीजे दूर भगाय जी ॥१४॥

तुझ मन में चिन्ता मृत्यु की, बोले यों मुनिराज ।
कब व कैसे मेरी मृत्यु होगी, कहे नर-राज जी ॥१५॥

हे राजन तू विद्युत योग से, दिवस सातवें मरसी ।
उपाय किये पर समय तुम्हारा, टाले से नहीं टलसी जी ॥१६॥

मर कर जाऊँ कहाँ मुनिश्वर, वह गति भी फरमावें ।
होगा कीट तू लाल मुँह का, मुनिराज दरसावे जी ॥१७॥

स्थान कौनसा ? तेरा जाजरू, मेले में जनमेगा ।
निजकरणी के कारण जाकर, वहाँ तू दुःख भोगेगा जी ॥१८॥

वापिस आकर बुला कँवर, यों कहे पुत्र सुन म्हारी ।
मैं होऊँगा कीड़ा मरकर, दीजे मुझको मारी जी ॥१९॥

दिवस सातवें मर कर राजा, कीट बना मुख लाल ।
कँवर मारने गया उसे तब, घुसे समझ निज काल जी ॥२०॥

कँवर आय मुनिवर से बोला, वह मरना नहीं चावे ।
कहके दाता मरे मुझ यह, उस दुःख से छुड़वावे जी ॥२१॥

इस कारण मालूम होता है, यह तो जीव वे नांही ।
ज्यों-ज्यों पकड़ना चाहूँ उनको, छिपे उसी के मांही जी ॥२२॥

मुनि कहे हे कँवर वही तो, कीट समझ भूपाल ।
मौत किसी को नहीं है प्यारी, देख डरे निज काल जी ॥२३॥

देवलोक में जैसे इन्द्र को, अपने प्राण पियारे ।
इसी तरह से चाहे जिन्दगी, जीव जगत के सारे जी ॥२४॥

जीव रक्षा सम धर्म नहीं है, हिंसा सम नहीं पाप ।
सभी सन्त और सभी पन्थ में, लगी हुई यह छाप जी ।।२५।।

कँवर कहे हे नाथ जीव यह, क्यों दुर्गति में जाय ।
कृपा करी मुझ दिल को शंका, दीज्यो आप मिटाय जी ।।२६।।

शुभ अशुभ परिणाम जीव के, लेश्या ही कहलाय ।
तीन अशुभ और तीन है उत्तम, ज्ञानी जन फरमाय जी ।।२७।।

कृष्ण, नील, कापोल तीन ये, अशुभ गति ले जाय ।
तेजो, पद्म और शुक्ल जीव को, ऊँची गति दिलवाय जी ।।२८।।

हे दयालो ! नाम सुना पर, कथा प्रसंग सुनावें ।
जिससे मेरी स्थूल बुद्धि में, समावेश हो जावे जी ।।२९।।

सुनो लगाकर ध्यान कँवर तुम, छः मित्रों की बात ।
गये एक दिन जंगल मांही, क्षुधा से दुःख पात जी ।।३०।।

फिरते वन में एक, तरु जामुन नज़र में आया ।
क्षुधा शांत होने का साधन, देख अति हरसाया जी ।।३१।।

एक कहे झट काट इसे, अब भूमि ऊपर डारो ।
आनन्द से फल खायें इसके, व्यर्थ ही वक्त गुजारो जी ।।३२।।

कहे दूसरा जड़ से काटना, मुझ मन में नहीं भावे ।
शाखा एक काटकर डालो, काम सिद्ध हो जावे जी ।।३३।।

तीजा कहे मत काटो शाखा, छोटी शाख उतारो ।
मेहनत भी थोड़ी होवेगी, बने काम भी सारो जी ।।३४।।

चौथा कहे प्रपंच छोड़ सब, गुच्छा-गुच्छा ले लो ।
खालेंगे सब बैठ मजे से, अन्य बात सब ठेलो जी ।।३५।।

कहे पांचवा गुच्छा लेकर, क्या करना है भाई ।
पक्के-पक्के तोड़ फलों को, लेंगे भूख मिटाई जी ।।३६।।

तब ही छठा बोला बंधव, क्यों ऊपर से तोड़ो ।
नीचे बहुत फल पड़े हुए हैं, नाहक वृक्ष मरोड़ो जी ।।३७।।

हमको केवल भूख मिटानी, क्यों हम वृक्ष सतावें ।
और बात को छोड़ सब हम, इनसे भूख मिटावें जी ।।३८।।

अनुक्रम से कृष्णादि लेश्या, समझो चतुर सुजान ।
खोटी लेश्या त्याग, अच्छी पर पूरा रखो ध्यान जी ।।३९।।

भिन्न-भिन्न लिया समझ कँवर ने, चरणों शीश नमाया ।
बारह व्रत को धारण करके, जीवन सफल बनाया जी ।।४०।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, सद्गुरु शिक्षा धार ।
सब जीवों को निज सम समझो, हो जावो भव पार जी ।।४१।।

२७ | जितना त्याग : उतना फल

(तर्ज—लावणी खड़ी)

विरक्त भावना होगी जितनी, उतना ही फल पावोगे ।
जिनवर फरमावें सर्व त्याग से, ऊँची गति में जाओगे ।।टेर।।

महेन्द्रपुर में महेन्द्र भूप था, प्रजा पाल अरु गुण गंभीर ।
दीन दुःखी की सदा सहायता, करके हरता उसकी पीर ।
सुबुद्धि परधान राज का, चार बुद्धि का ज्ञाता धीर ।
पक्ष छोड़कर न्याय करे जो, पय का पय और नीर का नीर ।।

शेर— सभी तरह था योग अच्छा, पर नहीं सन्तान जी ।
राात दिन चिन्ता करे, नरराज दिल दरम्यान जी ।
उपाय केई कर चुका, औषध खिलाई महान जी ।
सफलता कुछ ना मिली, हो गया हैरान जी ।।

छोटी कड़ी—

मंत्री भी संतानहीन दुःख पाता-२ आया, बांध अन्तराय हृदय समझाता ।
नहीं कीना कर्म शुभ कैसे फल शुभ पाता, बांधे हैं सो भोगे व्यर्थ कलपाता ।।

दौड़—ऐसे समय सुनी बात आये योगी उत्तम जात, सिद्ध पुरुष प्रख्यात
सुनी हरसाई ।
राजा मंत्री दोऊ चाल देखे सिद्ध दयाल, गया रंज निहाल कीनी नरमाई ।।
कर जोड़ भूप कहे आज हमारे, कष्ट आप मिटावोगे ।।१।।

महीपति की अरदास नाथ यह, अरजी मेरी सुन लीजे ।
दोनों हैं हम पुत्रहीन यह, कष्ट हमारा हर दीजे ।
चाहते हैं हम उत्तराधिकारी, योग्य ध्यान में ले लीजे ।
जिससे हो सन्तोष हमें, ऐसा उपाय बतला दीजे ।।

शेर— सिद्ध पुरुष कहे वात सुन, देऊँ तुझे वतलाय जी ।
कर भिखारी खूब शामिल, माल देवो लाय जी ।
फिर उन्हें कहो राज दूंगा, देवो इन्हें छिटकाय जी ।
मान ले जो वात, उनको राज दो संभलाय जी ।।

छोटी कड़ी—

जो आधा छोड़े उन्हें मंत्री पद देना, उत्तराधिकारी होने योग्य सुन लेना ।
वचन श्रवण कर पाया दिल में चैना, नमन करी कहे सत्य आपका कहना ।।

दौड़—लीने भिखारी वुलाय केई सामग्री दिलाय, फिर उन्हें यों फरमाय सुनलो ध्यान धरी ।
जिन्हें राज-पाट च्हाय देवो भोग छिटकाय, सुन भिक्षु वोले वाय नहीं करणी करी ।।
कर नहीं सकते विना पुण्य के, जैसा आप फरमावोगे ।।२।।

यों कहकर के गये भिखारी, कहाँ कर्म में ऐसा योग ।
एक भिखारी सोचे दिल में, अर्ध छोड़ दूं मिले यह भोग ।
हिम्मत करके आया दूसरा, त्यागा उसने सब संयोग ।
भूप इन्हें गज होदे लाया, देख प्रशंसा करते लोग ।।

शेर— सर्व त्यागी को वना नृप, राज काज संभलाय जी ।
अर्ध त्यागी मंत्री वना, उद्घोषणा करवाय जी ।
भूप मंत्री आत्मकाज कर, शिव गति ली अपनाय जी ।
इस कथा का भाव समझो, ज्ञानी यों फरमाय जी ।।

छोटी कड़ी—

सिद्ध पुरुष ही वीर प्रभु कहलावे-२, सभी जगत के जीव भिक्षु वतलावे ।
सर्व त्याग कर मुनिराज पद पावे-२ अल्प त्याग से मंत्री श्रावक हो जावे ।।

दौड़—दिल में धारे भवि जीव देवे मोक्ष की ही नींव, दया धर्म जल पीव सुखी हो जावे ।
कहे 'प्राज्ञ' गुरुदेव त्याग वड़ा नितमेव कर, ज्ञानी जन सेव 'सोहन' मोक्ष जावे ।।
इन्द्रिय दमन करो भवि प्राणी, भव सागर तिर जावोगे ।।३।।

□ □ □

२८ | सुसंगति

(तर्ज:—काजलिया)

सुसंगत ही जीव का कोई कर देवे उद्धार, सज्जनो सुरण लीज्यो ।
सज्जन संगति कीजिए, कोई दुर्जन दीजे टार ।।सज्जनो।। १ ।।

कथा कहूँ इरण ऊपरे, कोई सुनो लगाकर ध्यान स. ।
आलस निद्रा छोड़ के, कोई लीज्यो हिरदय ज्ञान स. ।। २ ।।

जम्बूद्वीप का भरत में, कोई पृथ्वीपुर है शहर स. ।
धर्म शील राजा वहां, कोई पूर्ण प्रजा पर महर स. ।। ३ ।।

न्याय-नीति में निपुण है, कोई धर्म तत्त्व का जाण स. ।
भूप सदा गुण शोभता, कोई रखे दु:खी पर ध्यान स. ।। ४ ।।

कीर्ति चहुँ दिशि फैलगी, कोई होय प्रशंसा पूर स. ।
सज्जन का आदर करे, कोई दुर्जन से रहे दूर स. ।। ५ ।।

एक समय अन्य देश में, कोई पड़ा काल दु:खदाय स. ।
लोग सभी तज स्थान को, कोई दूर क्षेत्र में जाय स. ।। ६ ।।

भाव साल एक सेठजी, कोई मन में करे विचार स. ।
कहां जाय विश्राम लू, कोई हल्का हो दु:खभार स. ।। ७ ।।

सोच वहां से चल दिया, कोई पृथ्वीपुर में आय स. ।
नृप आज्ञा लेकर रहा, कोई आनन्द में दिन जाय स. ।। ८ ।।

व्यापार नीति से कर रहा, कोई दिया कपट को त्याग स. ।
दिन-दिन वृद्धि हो रही, कोई लोग सराहे भाग स. ।। ९ ।।

सेठ पा रहा राज से, कोई सभा बीच सम्मान स. ।
सेठ हृदय में सोचता, कोई अच्छा मिल गया स्थान स. ।।१०।।

एक दिन सेठ के कान में, कोई आई यह आवाज स. ।
अब सुकाल वहां हो गया, कोई नहीं चिन्ता का काल स. ।।११।।

भूप पास में आय के, कोई सेठ करे अरदास स. ।
आप कृपा से यहां रहा, कोई सफल हुई मुझ आश स. ।।१२।।

महर करी अब दीजिए, कोई जावण आज्ञा नाथ स. ।
उपकार कभी भूलूं नहीं, कोई दुःख में दीनो साथ स. ।।१३।।

सुनकर महिपति चिन्तवे, कोई अच्छा अवसर आज स. ।
करके परीक्षा देख लूं, कोई कैसी सभा समाज स. ।।१४।।

भूप कहे हे सेठजी, कोई जा रहे हो निज देश स. ।
किन्तु बोल वह याद है, कोई जो कीना था पेश स. ।।१५।।

सेठ कहे क्या बात थी, कोई भूल गया मैं कोल स. ।
यदि याद हो आपको, कोई देवे जल्दी खोल स. ।।१६।।

कोल तुम्हारा था यही, कोई भूप कहे उस बार स. ।
जाऊंगा तब आपको, कोई दे दूंगा निजनार स. ।।१७।।

भूल गये हो सेठजी, कोई सभा है साक्षीदार स. ।
याद करो उस बात को, कोई स्थिर कर मन इस बार स. ।।१८।।

सेठाणी को सौंप के, कोई फिर जावो निज देश स. ।
वाणी सुनकर भूप की, कोई लगी सेठ दिल ठेस स. ।।१९।।

भरी सभा के बीच में, कोई भूप कहे ललकार स. ।
बोलो जिनको याद हो, कोई होय अभी निराधार स. ।।२०।।

कुछ व्यक्ति यों बोलिया, कोई जब आया साहूकार स. ।
वादा तब इसने किया, कोई देकर जाऊं नार स. ।।२१।।

धर्मी जन तो चुप रहे, कोई कभी न हो यह काम स. ।
भूपति दूर रहे सदा, कोई जिनसे हो बदनाम स. ।।२२।।

सेठ हृदय चिन्ता घणी, कोई हो रहा अन्याय स. ।
सुनकर कीर्ति भूप की, कोई फंस गया यहां पर आय स. ।।२३।।

अब कैसे इस काम से, कोई मेरा हो छुटकार स. ।
हां भी कैसे कर सकूं, कोई कैसे करूं इन्कार स. ।।२४।।

मौन धार कर सेठजी, कोई खड़े रहे उस वार स. ।
अनहोनी होवे नहीं, कोई मन में निश्चय धार स. ।।२५।।

भूपति दिल में यों कहे, कोई बैठे अधर्मी लोग स. ।
धर्म कर्म सब नष्ट हो, कोई ऐसा जहाँ संयोग स. ।।२६।।

इतने दिन मैं जानता, कोई मेरे राज्य में न्याय स. ।
किन्तु आज मालूम हुआ, कोई फैल रहा अन्याय स. ।।२७।।

गुमसुम हो गया भूपति, कोई चिन्ता चित्त अपार स. ।
आज सभा की बात से, कोई दिल में हुआ विचार स. ।।२८।।

भूप कहे सुनो सेठजी, कोई मुझको दुःख अपार स. ।
आज सभा की बात से, कोई दिल में हुआ विचार स. ।।२९।।

देखो यहां पर धर्म का, कोई हो रहा बण्टाधार स. ।
न्याय धर्म बिन क्या सभा, कोई है बिल्कुल निस्सार स. ।।३०।।

करी परीक्षा आज मैं, कोई सभी अधर्मी लोग स. ।
मिथ्या शब्द उच्चार के, कोई बढ़ा रहे भव रोग स. ।।३१।।

आदेश दिया यों भूपति, कोई देवो देश निकाल स. ।
सम्पत्ति सब कब्जे करो, कोई करके बुरा हवाल स. ।।३२।।

उनकी हालत देख के, कोई बदल गया सब रंग स. ।
योग्य भूप के योग से, कोई सुधर गया है ढंग स. ।।३३।।

भरी सभा में सेठ का, कोई किया भूप सम्मान स. ।
सेठाणी भगिनी बना, कोई दिया खूब सम्मान स. ।।३४।।

पहुँचाये निज देश में, कोई भेज सन्तरी साथ स. ।
जनता सब धन्यवाद दे, कोई न्यायी है नरनाथ स. ।।३५।।

सम्मान पाय सज्जन वहां, कोई नहीं दुर्जन का काम स. ।
राजा प्रजा सुख में रहे, कोई बना स्वर्ग का धाम स. ।।३६।।

ऐसे जहां हो नरपति, कोई सुखी बने नरनार स. ।
नृप की जैसी नीति हो, कोई वैसा बने संसार स. ।।३७।।

धर्म घोष आये तदा, कोई सुनवाणी सुखकार स. ।
राजा तजकर राज को, कोई लीनो संयम भार स. ।।३८।।

सम्यक्ज्ञान क्रिया करे, कोई धर कर चित्त उल्लास स. ।
अन्त समय अनशन करी, कोई किया स्वर्ग में वास स. ॥३९॥

'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' कहे, कोई लीज्यो दिल में धार स. ।
सज्जन की संगत करो, कोई दीज्यो दुर्जन टार स. ॥४०॥

दो हजार तेईस में, कोई चौमासो सुखकार स. ।
शहर मसूदा मांय ने, कोई वरत्या मंगलाचार स. ॥४१॥
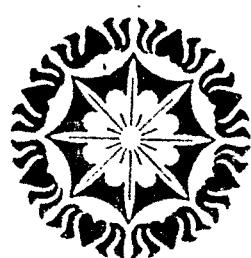
२६ उन्नति की नींव : नम्रता

(तर्ज:—लावणी खड़ी)

सदा नम्रता धार हृदय में, यदि उच्च बनना चावे ।
रखो ध्यान यह अच्छा पद पा, कभी गर्व नहीं आ जावे ।।टेर।।

अंग्रेजी शासन की घटना, सुनो लगाकर बन्धव ध्यान ।
नहीं पाते थे भारतवासी, कभी यहीं पर अच्छा स्थान ।
किन्तु श्री बन्द्योपाध्याय, सर गुरुदास ने पढ़कर ज्ञान ।
हाईकोर्ट कलकत्ते में जज बन, पाया था उत्तम स्थान ।
मुख्य कुलपति का पद भी, वहीं विश्वविद्यालय में पावे ।। १ ।।

एक समय वे न्यायालय में, सुने मुकदमा देकर ध्यान ।
उस समय एक बुढ़िया आकर, लगा रही है ऐसी तान ।
कहो-कहो गुरुदास मिले कहाँ, नहीं सुने कोई देकर ध्यान ।
कभी-कभी कोई यों कह देता, होंगे न्यायालय दरम्यान ।
जाने लगी अन्दर बुढ़िया तब, कहे सन्तरी कहाँ जावे ।। २ ।।

फटे पुराने गले वस्त्र तन, वृद्धा मन में सोच रही ।
अरे यहाँ आकर के मैं, नहीं गुरुदास से मिल पाई ।
सूर्य ग्रहण होने से यहाँ पर, गंगा स्नान हित मैं आई ।
फिर कब होगा मेरा आना, यह चिन्ता चित्त में छाई ।
रहा सिपाही रोक उसे, पर वह अन्दर जाना चावे ।। ३ ।।

आवाज सुनी सब काम त्याग, जज बाहर चल करके आवे ।
वृद्धा को लख न्यायाधीश, झट चरणों में आ गिर जावे ।
लोक अनेकों देख दृश्य वहाँ, हक्के बक्के रह जावे ।
फटे पुराने हाल वृद्धा के, चरणों में क्यों शिर नावे ।
इनसे इनका क्या रिश्ता है, यह भी समझ में नहीं आवे ।। ४ ।।

वृद्धा नेत्र से अश्रु डाल कहे, जीवो मेरे सुत गुरुदास ।
कई दिनों से मिलने की थी, पूरण हो गई मेरी आस ।

न्यायाधीश पद और प्रतिष्ठा, सभी भूल कर खड़े हो पास ।
शीश झुकाकर विनययुक्त कहे, क्षमा करें चरणों का दास ।
सभी सामने न्यायाधीश कहे, माता मेरी कहलावे ॥ ५ ॥

बाल्यकाल में दूध पिलाकर, मुझको स्वस्थ बनाया है ।
कई दिनों से इनका मैंने, शुभ दर्शन अब पाया है ।
बुढ़िया ने भी यहां आने का, भाव सभी दरसाया है ।
मिलकर जाऊँ मुझ बेटे से, यह मेरे मन आया है ।
आज सभी को छुट्टी दे जज, मां को भवन पर ले जावे ॥ ६ ॥

जो दूध पिलाने वाली मां की, इतनी करे सार संभार ।
जन्मदात्री जननी की वह, कितनी करता होगा सार ।
किया हुआ उपकार न भूले, बड़े पुरुष के चिह्न विचार ।
कृतघ्न पुरुष ही सद्य विसरते, किया हुआ निज पर उपकार ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, कृतज्ञ बन यदि सुख चावे ॥ ७ ॥

३० | सच्ची सामायिक
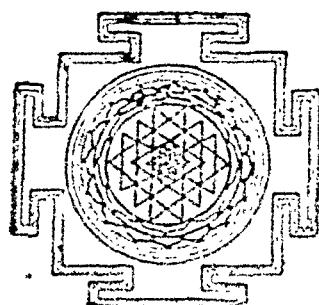
(तर्ज—द्रोण)

शुद्ध देव गुरु धर्म हिया में धारें, महा. जो जग से तिरना चावे जी ।
समता भाव युत सामायिक, भव पार लगावे जी ।।टेर।।

राजगृह का श्रेणिक नृप बलकारी, महा. चेलणा है पटरानी जी ।
मन्त्री अभयकुमार, चार बुद्धि का धारी जी ।
राज-काज में दक्ष, पक्ष नहीं किसकी, महा. प्रजागण आनन्द पावे जी ।
चोर जार अन्यायी, इनसे सब भय खावे जी ।
दया धर्म का जाण आण जिन चाले, महा. धर्म के रंग रंगावे जी ।।१।।

उसी शहर में श्रावक धर्मचन्द नामी, महा. आण जिनवर की पाले जी ।
अन्याय अनीति त्याग, न्याय नीति में चाले जी ।
घर में करोड़ों का माल पुण्य से पाया, महा. दान नित करता कर से जी ।
दीन अनाथ निराश, नहीं हो जाते घर से जी ।
शचि समा सतवन्ती नार है जिनके, महा. सभी गुण जिनमें पावे जी ।।२।।

पुत्र नम्र विद्वान् चार सुखकारी, महा. हाट का काम संभारे जी ।
चलता अच्छा काम, फैला यश जग में सारे जी ।
देख विदुषी कन्या पुत्र परणावे, महा. आनन्द घर में बरतावे जी ।
सेठ करे धर्म ध्यान, नित्य रख भाव सवाये जी ।
मुनीम नौकर दास सभी हैं इनके, महा. आय अच्छी हो जावे जी ।।३।।

कर्मचन्द शाह उसी स्थान में रहता, महा. सुशीला है घर नारी जी ।
षट्गुण की है धार, पतिव्रत पालनवारी जी ।
कर्म योग से घर की सम्पत्ति जावे, महा. दम्पति अति दुःख पावे जी ।
नहीं रहा कुछ पास, काम कैसे अब थावे जी ।
व्यापार करे नहीं रहा पास में पैसा, महा. चित्त में चिन्ता छावे जी ।।४।।

विचार करता गया सामायिक करने, महा. श्रावक धर्मचन्द भी आये जी ।
सामायिक करने हित, तन से वस्त्र हटाये जी ।
देख कीमती हार कर्मचन्द सोचे, महा. हार घर पर ले जाऊँ जी ।
बन जाये मेरा काम, दुःख से मैं टल जाऊँ जी ।
मौका पाकर हार उठा घर लाया, महा. चित्त में अति घबरावे जी ॥५॥

सामायिक कर सेठ धर्मचन्द वहाँ पर, महा. वस्त्र जब पहने तन पे जी ।
आया नजर नहीं हार, सेठ यों सोचे मन में जी ।
यहाँ से उठाकर हार कौन ले जावे, महा. अभी यहाँ कोई न आया जी ।
कर्मचन्द कर सामायिक, वह अभी सिधाया जी ।
वही उठा ले गया हार को घर पे, महा. कारण क्या वह ले जावे जी ॥६॥

विचार करता सेठ हृदय में आया, महा. चोरी वह कभी न करता जी ।
सभी कार्य करने में, पूरा विवेक रखता जी ।
फिर भी समझूं भूल नहीं है उसकी, महा. विवशता वश यह कीनी जी ।
अतः उसे नहीं कहना कुछ भी, समता लीनी जी ।
यही समझ कर मन को शांति दीनी, महा. खबर नहीं कोई पावे जी ॥७॥

कर्मचन्द ला घर पर हार विचारे, महा. अनर्थ कर लीना भारी जी ।
पर धन लाया निगाह चुरा, गई इज्जत सारी जी ।
ऐसे सोचते आई उदासी गहरी, महा. नार लख कर दरसावे जी ।
किस कारण चेहरे पे, गहरा रंज दिखावे जी ।
आज हो गया अनर्थ मुझ से भारी, महा. बात सब ही दरसावे जी ॥८॥

सुनकर बोली अच्छा काम नहीं कीना, महा. दम्पति अश्रु डारे जी ।
क्यों आया नाथ विकार, चित्त यह दुःख अनपारे जी ।
अब वापिस जाकर उन्हें आप संभलावो, महा. चाहे जो वहां से लावो जी ।
सेठ बड़ा गम्भीर, आप मत शंका लावो जी ।
बात मान कर गया सेठ के पासे, महा. सेठ सादर बैठावे जी ॥९॥

साधर्मी का सम्मान प्रेम से कीना, महा. मधुर शब्दों से बोले जी ।
[illegible] मुझ लायक सेवा, मुख से खोले जी ।
नमस्कार के व्यवहार श्रावक को बोला, महा. हार मैं लेकर आया जी ।
रख गिरवे तू दाम, आपको यों दरसाया जी ।
दो हजार की [illegible] हार रख लेवें, महा. छुड़ाऊँ अवसर आवे जी ॥१०॥

देख हार को सेठ समझ गया सारी, महा. मुनीम को यों दरसावे जी।
दो हजार दे हार यहाँ, गिरवे रख लेवे जी।
हार हाथ में लेकर ऐसे बोला, महा. हार तो है यह अपना जी।
सेठ कहे क्यों करो बात, क्या आ रहा सपना जी।
क्या अपने सिवा नहीं हार जगत् में कहीं पर, महा. उसी क्षण रुपये
गिनावे जी ।।११।।

सेठ कहे यह हार वापिस ले जावो, महा. दाम की चिन्ता नांही जी।
समझो आपकी हाट, शंका मत रक्खो कोई जी।
जबरन रखकर हार स्थान पर आया, महा. व्यापार में अर्थ लगाया जी।
चन्द समय के बाद, भाग्य जब सुलटा आया जी।
हो गई सम्पत्ति लाखों की घर मांही, महा. कर्मचन्द ध्यान लगावे जी ।।१२।।

लेकर जाऊँ रकम सेठ के द्वारे, महा. दाम सब देकर आऊँ जी।
किये कर्म की क्षमा मांग, अपराध खमाऊँ जी।
ले रकम साथ में सेठ द्वार पर आया, महा. श्रावक लख कर हरसाया जी।
देकर आदर, बड़े प्रेम से पास बिठाया जी।
कर्मचन्द कहे रकम आपकी लीजे, महा. दाम ले हार दिरावे जी ।।१३।।

कर्मचन्द कहे हार न मुझको चाहे, महा. अरज म्हारी सुन लीजे जी।
मैं हूँ अपराधी, कृपा करी मुझ माफी दीजे जी।
हार चुरा कर भारी पाप कमाया, महा. गति क्या होगी म्हारी जी।
कहते आया कर्मचन्द के, नयनों वारी जी।
श्रावक धर्मचन्द देख उसी क्षण बोले, महा. दोष सब मुझ में पावे जी ।।१४।।

इस कार्य का दोषी हूँ मैं भारी, महा. स्वधर्मी सार न लीनी जी।
धन पाकर के भूल गया, धनपति मन मानी जी।
लाख-लाख धिक्कार मेरे इस धन को, महा. खोल दिये नेत्र हमारे जी।
शिक्षा गुरु कहूँ शिक्षा दे, मम कार्य सुधारे जी।
मैं करूँ प्रतिज्ञा आज से सुन लो भाई, महा. दुःखी कोई नजर में
आवे जी ।।१५।।

सुन कर उसकी बात ध्यान से सारी, महा. दुःख सब दूर हटाऊँ जी।
करके उसको सुखी, बाद में रोटी खाऊँ जी।

हार सहित सब रकम स्वधर्मी खाते, महा. लाखों का फण्ड बनाया जी।
कर्मचन्द भी, निज सम्पत्ति से सुकृत कमाया जी।
समता से कितना लाभ हुआ जीवन में, महा. सामायिक यह
कहलावे जी ॥१६॥

यों समझ सामायिक करके जीवन तारो, महा. पुण्य से नरभव पायो जी।
दशबोला को योग मिल्यो है, भाग्य सवायो जी।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' सुनावे, महा. सामायिक अमर बनावे जी।
रामपुरा स्वाध्याय संघ में, हर्ष भरावे जी।
दो हजार बत्तीस पोस सुद नवमी, महा. रामपुरा विचरत आवे जी ॥१७॥
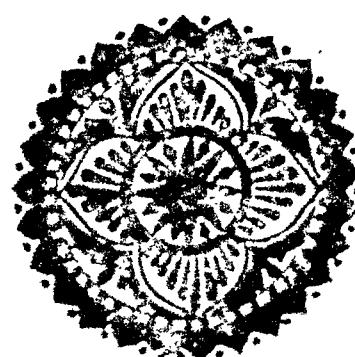
३१ बुरे बुराई

(तर्ज—अष्टपदी लावणी)

बुराई मत करज्यो भाया, बुरे का बुरा ही फल पाया ।।टेर।।

सिंहपुर शहर बड़ा गुलजार, भूमिपति भूपसिंह भूपाल ।
प्रजागण छाया में खुशहाल, कोष में गहरा है धनमाल ।।

दोहा :— उसी शहर मांहि बसे, सेठ बसु सुखकार ।
सेठाणी सरला घर मांहीं, मन की बड़ी उदार ।।
निराश नहीं लौटे घर आया ।।१।।

पुत्र अरु पुत्री घर में दोय, कान व कानी नाम दिया सोय ।
दम्पती चतुर सन्तति जोय, आश नित नई नई सजोय ।।

दोहा :— पुत्र विज्ञ हो काम की, पूरी करे संभाल ।
सेठ सेठाणी ऐसे वक्त में, दोनों कर गये काल ।।
पुत्र अरु पुत्री दुख पाया ।।२।।

रहे अब दोनों बहिन भाई, द्रव्य की घर में कमी नांही ।
प्रेम है अति आपस मांही, एक बिन एक रहे नांही ।।

दोहा :— एक दिवस कहे बहिन से, जाऊँ कमाने काज ।
समुद्र मांही भरे पड़े हैं, सभी माल के जहाज ।।
काम सब घर का समझाया ।।३।।

बात सुन बहिन घबराई, बोली यों नयन नीर लाई ।
जल्दी से आना हे भाई, पत्र में पोल करो नांही ।।

दोहा :— मन को कर मजबूत वह, बैठा जहाज में जाय ।
दूर दिसावर में चला, शहर कनकपुर आय ।।
भेंट ले भूप पास आया ।।४।।

भेंट लख भूपति हरषाया, माफ सब हासल करवाया ।
खरीद्‌ू माल पसन्द आया, महीपति ऐसे हरषाया ।।

दोहा :— क्रय करते वहाँ भूप ने, देखी एक तस्वीर ।
शचि रूप लख मुग्ध हो गया, वहां पर वह नरवीर ।।
कहो यह किसकी परछाया ।।५।।

वहिन है मेरी यों कहे कान, निर्णय ले बोले यों राजान् ।
मेरे संग शादी की लो मान, मंजूरी दीनी उस क्षण कान ।।

दोहा :— मंत्री सुनकर बात को, मन में करे विचार ।
राणी बनकर आवेगी, यहां एक विदेशी नार ।।
चरण में झुकेगी हम काया ।।६।।

सोच कर भूप पास आया, बात कर नृप को समझाया ।
गलत यह नृप को दरसाया, शादी मैं उससे कर आया ।।

दोहा :— क्रोधित होकर भूप ने, बुला कान को पास ।
मन्त्री को सन्मुख कर बोला, कह दो हमको खास ।।
मिथ्या कह मुझको भरमाया ।।७।।

कान कहे शादी हुई नांहीं, मिथ्या कहे मंत्री यहां आई ।
यदि हो बात सत्य राई, पूछूं वह देवो बतलाई ।।

दोहा :— उनके अंग में चिह्न क्या, देवे यह दरसाय ।
और अंगूठी उनके कर की, लाकर दो दिखलाय ।।
मंत्री कहो नृप ने फरमाया ।।८।।

मंत्री कहे मुझे समय दीजे, मास एक मांही ले लीजे ।
कान को यहीं रहने दीजे, सोचे अब मंत्री क्या कीजे ।।

दोहा :— मंत्री अश्व वह चल दिया, आया कान के ग्राम ।
फिरे नगर में देखण मांही, बना नहीं कुछ काम ।।
निराश हो बैठा वृक्ष छाया ।।९।।

मांगती भिखारिन आई, दाम दियो एक हाथ मांही ।
सकल कथा बोली उन तांई, उदासी क्यों मुख पर छाई ।।

दोहा :— बात कही सब खोलकर, सुन बोली तत्काल ।
काम बनाऊं सभी आपका, लाकर दूं सब हाल ।।
निश्चिन्त हो होगा मन चाया ।।१०।।

गुणी मुनि विचरत वहां आये, वाणी सुन श्रोता सुख पाये।
नियम लो मुनिवर फरमाये, कान तब मन में यों लाये॥

दोहा :— श्रावक के व्रत ग्रहण कर, पाया अमर विमान।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, वद त्यागो इंसान॥

कथा सुन समझो सब भाया॥१७॥

प्रवर्तक कुन्दन मुनिराया, विचरते शहर जावद आया।
चार व्याख्यान फरमाया, श्रावकगण परमानन्द पाया॥

दोहा :— दो हजार बत्तीस की, पोह दशमी सुखकार।
पार्श्व जयन्ती मना ठाठ से, सुना दिया अधिकार॥

ध्यान में लो गुरु फरमाया॥१८॥
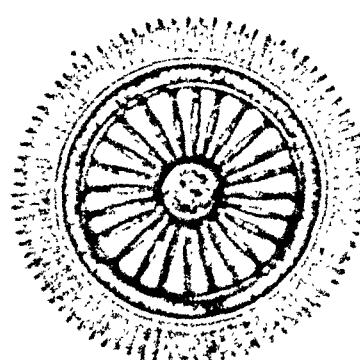
३२ महानता का मन्त्र

(तर्ज—छोटी लावणी)

पाकर के सम्पत्ति फूलो मत मन मांही,
रखो पूर्व की स्थिति याद नित भाई ।। टेर ।।

एक छोटे गांव से निकल बोम्बे में आई, ज्ञानचन्द रहा घूम बाजार के मांही ।
एक सेठ पास में जाकर बात सुनाई, आया हूँ मैं यहाँ नौकरी तांई ।।
रख लिया हाट पर दीना काम भुलाई ।। १ ।।

दोनों वक्त दे झाड़ू करो सफाई, कपड़े रोटी दूंगा सेठ सुनाई ।।
करता है काम नित रख पूरी चतुराई, एक दिन पढ़ता देख सेठ फरमाई ।।
शाला में तूने कहाँ तक करी पढ़ाई ।। २ ।।

वह बोला कुछ ही पढ़ा लिखा हूँ स्वामी, लिखवाया उससे अक्षर देखे नामी ।
बहिये आई हाथ मुनीम पद पामी, देखा इसका काम प्रसन्न हुआ स्वामी ।।
अल्प दिनों में मुखिया दिया बनाई ।। ३ ।।

पहले से अच्छा काम हाट पर आवे, हिसाब पूरा रखे काम भुगतावे ।
देखा अच्छा काम ग्राहक बहु आवे, दिन-दिन दुकान की ख्याति बढ़ती जावे ।।
ईमानदारी से ज्ञान तरक्की पाई ।। ४ ।।

यह देख सभी नौकर दिल में दुःख पावे, जो आती ऊपर आय नहीं वह आवे ।
छिपा चीज जो भी ले जाना चावे, पर ज्ञान के भय से नहीं दाव लग पावे ।
इससे इन पर है जलन रहे है सदाई ।।५।।

देखे ज्ञान का छिद्र चूक कहीं पावे, तो खाकर चुगली सद्य इन्हें निकलावे ।
किन्तु कहीं पर गलती नजर नहीं आवे, उल्टा यह तो दिन २ बढ़ता जावे ।।
एक दिन इनके बात नजर में आई ।। ६ ।।

इधर-उधर लख ज्ञान भवन में जावे, अन्दर से कर बंद देख फिर आवे ।
यह देख सेठ से हमेशा चुगली खावे, करते हो विश्वास यह जाल बिछावे ।।
चलो हमारे संग देंगे बतलाई ।। ७ ।।

जाकर उनकी कोटड़ी आप दिखावो, मिलेगा इतना माल अचंभा पावो ।
करी भरोसा नाहक माल गमावो, वात हमारी मान चेत अब जावो ॥
फिर भी सेठ नहीं दिल में शंका आई ॥ ८ ॥

नहीं सुने तथापि आकर कहते सारे, क्या आप सामने हम सब झूठ उच्चारे ।
एक वक्त तो जाकर आप संभारे, अति कहने से सेठ हिया में धारे ॥
जाकर देख लूं कहां तक है सच्चाई ॥ ९ ॥

मौका देखकर सेठ को वहां पर लावे, जिस समय कोठड़ी मांही ज्ञानजी जावे ।
अन्दर बढ़ कर पेटी खोलना चावे, उसी क्षण आ सेठ आवाज लगावे ॥
जल्दी खोलो कपाट क्यों देर लगाई ॥ १० ॥

कुछ विलम्ब से शंका सेठ को आई, खुलने में कैसे इतनी देर लगाई ।
कारण होगा निश्चय इसमें कोई, अब पूरी जांच कर देखूं क्या इण मांही ॥
विश्वास किया वास्तव में गया ठगाई ॥ ११ ॥

कपाट खोल कर ज्ञान अन्दर से आया, कर जोड़ सेठ से नम्र वचन दरसाया ।
क्या आज्ञा है तब सेठ ने यों फरमाया, क्या भरा पेटी में माल देखने आया ॥
तब हाथ जोड़कर ज्ञान ने करी मनाई ॥ १२ ॥

मना करने पर शंका सेठ दिल आवे, अब तो करके क्रोध सेठ फरमावे ।
क्या कारण है क्यों नहीं इसे दिखलावे, क्या भरा तस्करी माल उसे छुपावे ।
हठ करके सेठ ने पेटी को खुलवाई ॥ १३ ॥

फटी धोती अरु कुर्ता देख विस्माया, किस कारण से यह पेटी में धरवाया ।
पूछे सेठ सब रहस्य खोल दो भाया, शंका हो निर्मूल सुनूं चित्त चाया ।
तब ज्ञानचन्द ने अपनी बात सुनाई ॥ १४ ॥

मैं निकल गरीबी से इस स्थिति को पाया, कई काम लाखों का हाथ में आया ।
मेरे पर ना पड़े दर्प की छाया, इनको देखकर उतरे गर्व दिल आया ।
इसीलिए मैं रखूं पेटी मांही ॥ १५ ॥

गद्‌गद हो गया सेठ बात सुन सारी, लगा लिया छाती के अश्रु डारी ।
देऊं मैं धन्यवाद तुम्हें हुशियारी, आगे खोल दी बात सुनाकर म्हारी ।
तब मैं इनको दत्तक लिया बनाई ॥ १६ ॥

जो व्यक्ति पाकर ऋद्धि गर्व नहीं लावे, वे निश्चय एक दिन उच्च स्थान को पावे ।
'ज्ञान' प्रसादे 'मोहन' मुनि सुनावे, [illegible] शहर में आवे ।
[illegible] मास सुखदाई ॥ १७ ॥

○ ○ ○

३३ छहों दिशा की पूजा

(तर्ज—छोटी लावणी)

स्याद्वाद युत वीर वचन जो धारे,
मिट जावे चक्कर जन्म-मरण के सारे ।। टेर ।।

जिन-जिन पुरुषों ने हिय में इसे उतारा, वे पाये हैं संसार से सद्य किनारा ।
अतः गुरुदेव कहते बारम्बारा, करो आचरण हो जावे उद्धारा ।
समझो कथा सुन श्रोता गण अब सारे ।।१।।

पारस पुर में भूप पालक महाराया, वहाँ पर पारसनामा सेठ कोटी धन पाया ।
पुत्र कर्मचन्द पढ़कर घर पर आया, आज्ञा पालक पुत्र सेठ मन भाया ।
सारे घर का काम सेठ सौंपा रे ।।२।।

समय निकलते अंतिम दिन जब आया, कहे पुत्र से सुनो ध्यान से भाया ।
कहूँ सो करना काम भूल मत जाया, ६ ही दिशा नित पूजा कर फरमाया ।
नहीं समझ पड़े तो पूछ काका से जारे ।।३।।

यह कह कर उसको पिता स्वर्ग सिधारे, नित करता है वह आज्ञा अनुसारे ।
दिशा पूजते सारा दिवस गुजारे, व्यापार हो गया बन्द आमद हुई ख्वारे ।
कठिन हुआ है जीवन रहा दुःख पारे ।।४।।

एक दिन उसको लख काका यों बोले, कैसे पा रहा दुःख साफ मुख खोले ।
पितु आज्ञा से स्थिति हुई डमडोले, सुनकर सारी बात काका इम बोले ।
हित शिक्षा दी तुझे नहीं समझारे ।।५।।

उनकी आज्ञा थी अतः सुनाऊं भाया, ६ ही दिशा की पूजा कर दरसाया ।
इन द्रव्य दिशा के लिए नहीं फरमाया, थी वह सुन्दर बात समझ नहीं पाया ।
रहस्य बताऊं तुझे ध्यान में लारे ।।६।।

पूर्व दिशा में मात-पिता सुनो प्यारे, दक्षिण दिशा में भगिनी बंधव सारे ।
पश्चिम दिशा में सास-ससुर अरु साला, उत्तर दिशा में ज्ञाति मित्र रखवाला ।
ऊर्ध्व दिशा में गुरुजनों को कहा रे ।।७।।

नीची दिशा में दास-दासी है भाई, इनका कर सम्मान दिया चेताई।
जिससे होगा तुम जीवन सुखदाई, सुन काका की यह बात मैं ध्यान में आई।
करे प्रशंसा काका की गुण गा रे ॥८॥

उस ही दिन से सच्चे मार्ग में लागे, दुःख दरिद्र अब घर से सारा भागे।
हुआ सुखी वह काका कथन में लागे, पुनः भरा भण्डार लक्ष्मी हुई सागे।
यों समझ सूत्र का रहस्य हिय को जगा रे ॥९॥

इसी तरह कर सन्त सेवा कुछ पा लो, शब्द अर्थ को जान शंक सब टालो।
'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि हो उजवारो, रामपुरा का क्षेत्र सन्त सुखकारी।
बत्तीस पोस सुद चवदस दिन गुरुवारे ॥१०॥

३४ | जो होता है : अच्छा होता है

(तर्ज—द्रोण)

समय शुभाशुभ आय कभी प्राणी पर, महा. उसी में भला मनावे जी।
सुख-दुःख हित के लिए होय, ऐसे दरसावे जी ।।टेर।।

मणिपुर में हे मणिभद्र महाराया, महा. गुणावली है महाराणी जी।
पतिव्रता षट्गुण की धारक, है अति स्याणी जी।
सुमति चन्द्र है मन्त्री सुमति वाला, महा. राज का काम संभारे जी।
दीन दुःखी की सुने बात, दुःख उनका टारे जी।
इक वक्त भूप के हुआ अंगुली पर छाला, महा. महीपति अति दुःख पावे जी ।।१।।

किया केई इलाज शांति नहीं आई, महा. मन्त्री से यों फरमावे जी।
पा रहा अहो निशि दुःख, शांति नहीं क्षण भी आवे जी।
सुनकर मन्त्री कहे हुआ सो अच्छा, महा. भले के लिये यह जानो जी।
कर्मोदय से होय, उसी को सही कर मानो जी।
सुनी भूप को रोष हृदय में आया, महा. मन्त्री क्यों यह दरसावे जी ।।२।।

कुछ समय बाद आ डाक्टर ऐसे बोला, महा. रोग है यह भयकारी जी।
शनैः शनैः यह जहर फैल, हो पीड़ करारी जी।
अतः कटाकर अंगुली दूर करावो, महा. तभी सुख शांति पावो जी।
करके यह स्वीकार, आप अब हाँ फरमावो जी।
डॉक्टर से अंगुली महीपति ने कटवाई, महा. मन्त्री को अब दिखलावे जी ।।३।।

उसी तरह कहे हुआ काम यह अच्छा, महा. भूप दिल क्रोध भराया जी।
मेरे कष्ट को देख, मन्त्री नहीं चिन्ता लाया जी।
अवसर आवे कभी इसे दिखलाऊँ, महा. अच्छा जो यह बतलावे जी।
पता इसे लग जाय, फेर नहीं यह दरसावे जी।
एक दिवस मंत्री अरु भूप चले वन मांही, महा. भूप के मन में आवे जी ।।४।।

आज इसे कहने का मजा चखाऊं, महा. मन्त्री से यों दरसावे जी ।
लगी जोर से प्यास, कहीं जल खोज करावे जी ।
दोनों ढूंढते एक कूप पर आये, महा. देख जल आनन्द पावे जी ।
कहे भूप अब निकाल पानी, प्यास बुझावे जी ।
बिन पानी अब कंठ सूख रहे मेरे, महा. मन्त्री तरकीब लड़ावे जी ॥५॥

गया कूप पर पानी खींचने हेतु, महा. धक्का दे भूप गिरावे जी ।
गिरते बोला भला हुआ, सुन नृप विस्मावे जी ।
कम पानी था लगी नहीं मन्त्री के, महा. खोह में बैठा जाकर जी ।
करे प्रभु का ध्यान, चिन्ता सब मन से तज कर जी ।
गिरा मन्त्री को भूप चला है आगे, महा. समूह भीलों का आवे जी ॥६॥

चारों ओर से घेर कहे नर अच्छा, महा. सभी लक्षण युत पाया जी ।
पकड़ इसे ले चलो साथ, मुखिया फरमाया जी ।
उसी क्षण लिया बांध भूप को वहाँ पर, महा देवी के मन्दिर लावे जी ।
करा स्नान सब विधि युक्त, अब बलि चढ़ावे जी ।
भूप रहा घबरा अब मृत्यु आई, महा. कौन अब मुझे बचावे जी ॥७॥

एक नंगी खड्ग से मनुष्य सामने आया, महा. भूप ने शीश झुकाया जी ।
उस ही क्षण मुखिया ने, ऐसे शब्द सुनाया जी ।
देखो इसका अंग भंग है नांही, महा. भूप को जब संभारे जी ।
देख हाथ की कटी अंगुली, नर यों उच्चारे जी ।
है नहीं बलि के लायक इसको छोड़ो, महा. त्वरित नृप को छुड़वावे जी ॥८॥

वापिस आते भूप हृदय में सोचे, महा. मन्त्री ने ठीक सुनाया जी ।
जो होय भले के लिए, व्यर्थ में रोष भराया जी ।
यदि अंग भंग नहीं मेरा कुछ भी होता, महा. मौत मेरी आ जाती जी ।
कहता हित की बात नहीं, मेरे दिल भाती जी ।
अतः अभी जा मन्त्री को सम्भालूं, महा. आज आवाज लगावे जी ॥९॥

यदि होता आपके संग नहीं बच पाता, महा. छोड़ते हरगिज नांही जी।
अंग भंग नहीं देख, मेरी बलि करते वहाँ ही जी।
सुनकर भूप के समझ हृदय में आई, महा. राज में वापिस आवे जी ।।११।।

उस दिन के पश्चात् मन्त्री नृप दोनों, महा. लगे प्रभु भक्ति मांही जी।
जन सेवा से बचे वक्त को, खोते नांही जी।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि यों कहता, महा. विषम-सम जो स्थिति आवे जी।
रक्खे समता भाव वही, नर आनन्द पावे जी।
दो हजार बत्तीस होली चौमासी, महा. गंज भूपाल मनावे जी ।।१२।।

अशुद्धि	शुद्धि	पृष्ठ	पंक्ति
पलराता	पलटाता	३९	८
जावे ली	जावे जी	३९	१३
करूँ मैं उपचार	करूँ उपचार मैं	३९	२२
वर्णे	वर्षे	४५	७
कीमती	कमती	४६	८
पूर्ण	पूर्व	४९	२३
झार झंझार	झारमझार	५०	१
आवे	जावे	५५	१०
स्नानागार	स्नानागर	५६	२१
मुझ	मुझे	६८	२२
घुड़वावे	छुड़वावे	६८	२२
काल	काज	७४	२
'सोहन'	'सोहन मुनि'	८२	७
फरमाय	फरमाया	८५	६
बढ	बन्द	८८	८
शका	शंका	८८	१६
मैं	×	९०	२

सूचना :—नीचे लिखे पृष्ठों पर पंक्तियाँ ही छूट गई है :—

☐ पृष्ठ २ पद छठे में प्रथम पंक्ति :—

घर मुआफिक सभी करूँगा, कमी न रक्खूँगा महिपाल ।

☐ पृष्ठ ६, पद में, १०वीं पंक्ति गलत छप गई है अत:

भागवत विप्र एक नामी के स्थान पर

चले पति आज्ञा अनुगामी

☐ पृष्ठ ४५ पर पद····में पंक्ति इस प्रकार है :—

जागृति हो संघ में और शुद्ध हो आचार जी ।